पं- ...रीलाल
अथ गयामाहात्म्य भाषाटीकाप्रारंभः

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥ गणेश्वरं विघ्नविनाशकोविदं नत्वा च धीवैभवदां सरस्वतीम् ॥ माहात्म्यटीकां नगिरा गयाया मनोहरां चापि मितार्थवादिनीम् ॥ १ ॥ पदेन काव्यतीर्थेन भूषितो बुधसेवकः ॥ श्रीबलदेवशर्म्माहं करोमि विदुषां मुदे ॥ २ ॥ सूतजी बोलेकि, महाभाग शौनकादि ऋषिगणके साथ नारदजीने

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीगुरुभ्योनमः ॥ ॥ सूतउवाच ॥ शौनकाद्यैर्महाभागैर्देवर्षिः सहनारदः ॥ सनत्कुमारंपप्रच्छ प्रणम्यविधिपूर्वकम् ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ सनत्कुमारंमेब्रूहितीर्थंतीर्थोत्तमोत्तमम् ॥ तारकंसर्वभूतानांपठतांशृण्वतांतथा ॥ २ ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ वक्ष्येतीर्थंपरंपुण्यंश्राद्धादौसर्वतारकम् ॥ गयातीर्थंसर्वदेशेतीर्थेभ्योप्याधिकंशृणु ॥ ३ ॥

सनत्कुमारको विधिपूर्वक प्रणामकर पूछा ॥ १ ॥ नारदजीबोले कि, हे सनत्कुमार ! तीर्थोंमें उत्तमसेभी उत्तम और जिसकामाहात्म्यपढने तथा श्रवण करनेवाले सभी प्राणियोंकाउद्धार करनेवाला कौनतीर्थहैसोकहो ॥ २ ॥ सनत्कुमार बोले कि, परम पवित्र. श्राद्धादिकोंसे सब प्राणियोंका उद्धार करनेवाला सब तीर्थोंसे अधिक

श्रेष्ठ तीर्थ गयातीर्थ है उसका माहात्म्य कहता हूं सो सुनो ॥ ३ ॥ गयनामा असुरने तपस्या की थी ब्रह्माने यज्ञ करनेके निमित्त गयसे प्रार्थना करी, जब गयका शरीर प्राप्त हुआ तब धर्मराजने गयके शिरपर शिला स्थापन की ॥ ४ ॥ उस शिलापर ब्रह्माने यज्ञ किया और हे नारद ! ब्रह्मादिक देवता गयासुरके

गयासुरस्तपस्तेपेब्रह्मणाक्रतवेर्थितः ॥ प्राप्तस्यतस्यशिरसिशिलांधर्मोह्यधारयत् ॥ ४ ॥
तत्रब्रह्माकरोद्यागंस्थितश्चादिगदाधरः ॥ फल्गुतीर्थादिरूपेणनिश्चलार्थमहार्निशम् ॥ ५ ॥
गयासुरस्यविप्रेंद्रब्रह्माद्यैर्दैवतैः सह ॥ कृतयज्ञोददौब्रह्माब्राह्मणेभ्योगृहादिकम् ॥ ६ ॥
श्वेतकल्पेतुवाराहेगयायागमकारयत् ॥ गयनाम्नागयाख्यातंक्षेत्रंब्रह्मर्षिकांक्षितम् ॥ ७ ॥

निश्चल रहनेके हेतुसे आदि गदाधर (विष्णु) भी उस शिलापर सभी स्थित होगये। जब ब्रह्मा यज्ञ करचुके तो ब्राह्मणोंको गृहआदिक दक्षिणामें दिया ॥ ५ ॥ ६ ॥ श्वेतवाराहकल्पमें गयअसुरके साथ योग हुआ

श्री सूतजी बोले कि शौनकादि ऋषियों के साथ देवर्षि नारदजी सनत्कुमारजी को प्रणाम करके विधी पूर्वक पूंछते भये ॥ १ ॥ नारदने कहाकि हे सनत्कुमार ! उत्तमोत्तम तीर्थके माहात्म्य को कहिये जिसके पाठ व श्रवण करनेसे समस्त प्राणी मोक्ष हो जावै ॥ २ ॥ सनत्कुमार जी बोले कि परम पवित्र श्राद्धादि कर्म करने से मोक्ष देने वाला सम्पूर्ण देशो

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीगुरुभ्योनमः ॥ ॥ सूतउवाच ॥ शौनकाद्यैर्महाभागैर्देवर्षिः सहनारदः ॥ सनत्कुमारंपप्रच्छप्रणम्यविधिपूर्वकम् ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ सनत्कुमारमेब्रूहितीर्थंतीर्थोत्तमोत्तमम् ॥ तारकंसर्वभूतानांपठतांशृण्वतांतथा ॥ २ ॥ सनत्कुमारउवाच ॥ ॥ वक्ष्येतीर्थंपरंपुण्यंश्राद्धादौसर्वतारकम् ॥ गयातीर्थंसर्वदेशेतीर्थेभ्योप्यधिकंशृणु ॥ ३ ॥ गयासुरस्तपस्तेपेब्रह्मणाक्रतवेर्थितः ॥ प्राप्तस्यतस्यशिरसि शिलांधर्मोह्यधारयत् ॥४॥ तत्रब्रह्माकरोद्यागंस्थितश्चादिगदाधरः॥ फल्गुतीर्थादिरूपेणनिश्चलार्थमहर्निश

में श्रेष्ठ गया तीर्थके माहात्म्य को सुनो ॥ ३ ॥ प्रथम गयासुर दैत्यने ब्रह्मासे यज्ञ करानेकी इच्छा करके तप किया तो धर्मराज आकर गया सुरके शिरमें पत्थरकी शिला रक्खी ॥ ४ ॥ उसी शिलापर ब्रह्माजी यज्ञ करते भये, वहींपर आदि गदाधर भगवान तीर्थ रूपसे प्रगट होकर दिनरात्रि उसके निश्चलार्थ स्थित हुये ॥५॥ हे विप्रेन्द्र ! ब्रह्मादि देवताओंने वहींपर

ञ किया और ब्राह्मणोंको गृहादिक सामग्री देकर सन्तुष्ट किया ॥ ६ ॥ कुछ कालके बाद श्वेत वाराह कल्पमें गयने वहींपर यज्ञ किया तबसे ब्रह्मर्षियों करके भी आकांक्षित गया नामसे वह क्षेत्र प्रसिद्ध हुआ । ७ ॥ नरकमें स्थित पितर सदैव इच्छा करते हैं कि मेरा पुत्र गया जावै और हम मोक्ष हो जावै ॥ ८ ॥ गयामें आये हुए पुत्रको पितर देखकर अति

म् ॥ ५ ॥ गयासुरस्यावि प्रेंद्रब्रह्माद्यैर्देवतैःसह ॥ कृतयज्ञेददौब्रह्माब्राह्मणेभ्योगृहादिकम् ॥ ६ ॥ श्वेतकल्पेतु वाराहेगयोयागमकारयत् ॥ गयनाम्नागयाख्यातंक्षेत्रंब्रह्मर्षिकांक्षितम् ॥ ७ ॥ कांक्षन्तिपितरःपुत्रान्नरकाद्भयभीरवः ॥ गयांयास्यतियः पुत्रः सनस्त्राताभविष्यति ॥ ८॥ गयाप्राप्तं सुतंदृष्ट्वापितृणामुत्सवोभवेत् ॥ पद्भ्यामपिजलंस्पृष्ट्वास्मभ्यंकिन्नदास्यति ॥ ९ ॥ एष्टव्याबहवः पुत्रायद्येकोपिगयांव्रजेत् ॥ यजेद्वाचाश्वमेधेननीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥ १० ॥ गयांगत्वान्नदातायः पितरस्तेनपुत्रिणः ॥ पक्षत्रयनिवा

प्रसन्न होतेहैं और कहतेहैं कि मेरा नामलेकर यदि पुत्र पैरसे भी जल देवे तो हमको मानो समस्त पदार्थ प्राप्त हो गये ॥ ९ ॥ जिस किसी के बहुत से पुत्रों में से एक भी पुत्र गया में जावे और अश्वमेध यज्ञ को करै अथवा काले बैल का बृषोत्सर्ग करै ॥ १० ॥ या अन्न दान करे और तीन पक्ष (डेढ़ महीना) वास करे तो वह पुत्र सात कुलों को पवित्र करता

है ॥ ११ ॥ यदि समय न मिले तो पन्द्रह दिन या सात रात्रि या तीनही रात्रि रहने से कल्प कल्पान्तर के पाप गया जाने मात्र से नाश हो जाते हैं ॥ १२ ॥ जो मनुष्य गया में जाकर पितरों के नाम से अथवा अपने लिये तिल बिना पिंडदान करता है तो उसके ब्रह्महत्या मदिरापन गुरुस्त्री गमन और उसके संसर्ग से कृत पाप नाश हो जाते हैं ॥ १३ ॥

सीचपुनात्यासप्तमंकुलम् ॥ ११ ॥ नोचेत्पंचदशाहंवासप्तरात्रंत्रिरात्रकम् ॥ महाकल्पकृतंपापंगयांप्राप्य विनश्यति ॥ १२ ॥ पिण्डंदद्याच्चपित्रादेरात्मनोपितिलैर्विना ॥ ब्रह्महत्यासुरापानंस्तेयंगुर्वंगनागमः ॥ पापंतत्संगजंसर्वंगयाश्राद्धाद्विनश्यति ॥ १३ ॥ आत्मजोप्यन्यजोवापिगयाभूमौयदातदा ॥ यन्नाम्ना पातयेपिण्डंतंनयेद्ब्रह्मशाश्वतम् ॥१४॥ ब्रह्मज्ञानंगयाश्राद्धंगोगृहेमरणंतथा ॥ वासः पुंसांकुरुक्षेत्रमुक्तिरेषा चतुर्विधा ॥ १५ ॥ ब्रह्मज्ञानेनकिंसाध्यंगोगृहेमरणेनकिम् ॥ वासेनकिंकुरुक्षेत्रेयदि पुत्रोगयांव्रजेत् ॥ ग-

पुत्र अथवा और ही कोई हो गयाजीकी भूमि में जाकर नाम लेलेकर पिंडदान करने से पितर ब्रह्मलोक को जाते हैं १४ ब्रह्मज्ञान, गयामें श्राद्ध, गौशाला में मृत्यु, और कुरु क्षेत्रका वास यह चारों प्रकार से मनुष्योंकी मुक्ति होती है ॥ १५ ॥ यदि पुत्र गया में जाकर पिंडदान करे तो ब्रह्मज्ञान से क्या साध्य है गौशाला में मृत्यु होनेसे क्या कुरुक्षेत्र में वास करने

क्या होता है कुछ नहीं इससे बुद्धिमान आदमियों को उचित है कि सदैव सब काल में गयाजी में जाकर पिण्डदान करें ॥ १६ ॥ अधिमास जन्म दिन बृहस्पति शुक्रके अस्त समय सिंह राशि में स्थित बृहस्पतिमें भी गया श्राद्ध मने नहीं है ॥ १७ ॥ एक बार भी गया में जानेसे और पिंडदान करनेसे फिर उस मनुष्य को इस लोक में क्या दुर्लभ

यायांसर्वकालेषुपिण्डंदद्याद्विचक्षण ॥ १६ ॥ अधिमासेजन्मदिनेचास्तेपिगुरुशुक्रयोः ॥ नत्यक्तव्यंगया श्राद्धंसिंहस्थेऽपिबृहस्पतौ ॥ १७ ॥ सकृद्गयाभिगमनंसकृत्पिण्डप्रपातनम् ॥ दुर्लभंकिंपुनर्मन्येअस्मिन्ने वव्यवस्थितः ॥ १८ ॥ प्रमादान्म्रियतेक्षेत्रेब्रह्मादेमुक्तिदायके ॥ ब्रह्मज्ञानाद्ययामुक्तिर्लभतेनात्रसंशयः ॥ १९ ॥ कीकटादिमृतानांचपितॄणांतारणायच ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनवस्तव्यंसुविचक्षणैः ॥ २० ॥ ब्रह्म प्रकल्पितान्विप्रान्हव्यकव्यादिनार्चयेत् ॥ तैस्तुष्टैस्तोषिताः सर्वाःपितृभिः सहदेवताः ॥ २१ ॥ मुंडनंचो

है कुछ नहीं ॥ १८ ॥ अकस्मात् भी गया क्षेत्रमें मरने से ब्रह्मज्ञानी के तुल्य उसका मोक्ष हो जाता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ १९ ॥ बुद्धिमान को उचित है कि कीट पतंग पितरों के तारण हेतु यत्न करके गया में वास करे ॥ २० ॥ ब्रह्म कल्पित ब्राह्मणों को हव्य कव्यसे सन्तुष्ट करना चाहिये कारण कि उनके सन्तुष्ट होने से देवता सहित पितर सन्तुष्ट

हो जाते हैं ॥ २१ ॥ समस्त तीर्थों में शिर मुण्डन की विधी है परन्तु कुरुक्षेत्र विशाला और गयामे केवलविष्णु पदपर दण्डके स्पर्षसेही बिना पिण्डदान कियेही पितरों सहित यात्री मुक्त हो जाता है ॥ २२ ॥ २३ ॥ दण्डी पाप पुण्य को

पवासश्चसर्वतीर्थेष्वयंविधिः ॥ वर्जयित्वाकुरुक्षेत्रंविशालांविरजांगयाम् ॥ २२ ॥ दंडंप्रदर्शयोद्भिक्षुर्गयां गत्वानपिंण्डदः ॥ दण्डंस्पृष्ट्वाविष्णुपदेपितृभिःसहमुच्यते ॥ २३ ॥ नदंडीकिल्बिषंधत्तेपुण्यंवापरमार्थद म् ॥ अतःसर्वांक्रियांत्यक्त्वाविष्णुंध्यायेत्तुभावुकम् ॥ २४ संन्यसेत्सर्वकर्माणिवेदमेकंनसंत्यजेत् ॥ २५ ॥ मुंडपृष्ठाच्चपूर्वास्मिन्पश्चिमेदक्षिणोत्तरे ॥ सार्धक्रोशद्वयंमानंगयेतिब्रह्मणोरितम् ॥ पंचक्रोशंगयाक्षेत्रंक्रोश मेकंगयाशिरः ॥ २६ ॥ मन्मध्येसर्वतीर्थानित्रैलोक्येयानिसंतिवै ॥ श्राद्धकृद्योगयाक्षेत्रेपितॄणामनृणो

नहीं करते इससे सम्पूर्ण कामों का त्याग करके विष्णु का ध्यान करै ॥ २४ ॥ और सम्पूर्ण कर्म को त्याग कर देवै परन्तु वेद विहित कर्म को त्याग न करै ॥ २५ ॥ मुण्ड पृष्ठ स्थान से चारों तरफ ढाई २ कोश ब्रम्हा करके कहा हुआ [illegible] कोशमें गया क्षेत्र और एक कोश में गया शिर है ॥ २६ ॥ इसके मध्य में समस्त भूमण्डल के तीर्थ बास करतेहैं ।

ऐसे गया क्षेत्र में जो कोई श्राद्ध करता है सो पितृ ऋणसे उऋण हो जाता है ॥ २७ ॥ जो एक कोशके गया शिर से पिंडदान करता है वह एकसौ कुलों को उद्धार कर देता है ॥ २८ ॥ जो पुरुष गयाका नाम लेकर घरसे चलकर जितने पद रखते हैं उतनेही पितरों को स्वर्गकी सीढी होती जाती है ॥२९॥ और पद २ पर अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होताहै ॥३०

हिसः ॥ २७ ॥ शिरसिश्राद्धकृद्यस्तुकुलनाशात्समुद्धरेत् ॥ २८ ॥ गृहाच्चलितमात्रेणगयायांगमनंप्रति स्वर्गारोहणसोपानंपितृणांचपदेपदे॥२९॥ पदे पदेऽश्वमेधस्ययत्फलंगच्छतोगयाम् ॥३०॥ तत्फलंचभयेन्नृणांसमग्रंनात्रसंशयः ॥ पायसेनाथचरुणासक्तुनापिष्टकेनवा ॥ ३१ ॥ तंडुलैःफलमूलाद्यैर्गयायांपिण्डपातनम् ॥ तिलकल्केनखंडेनगुडेनसघृतेनवा ॥ ३२ ॥ केवलेनैवदध्नावाऊर्जेनमधुनापिवा ॥ पिण्याकखंडंचघृतंपितृभ्योक्षय्यमित्युत ॥ इष्यतेपितृभिर्भोज्यंहविष्यान्नंमुनीरितम् ॥ ३३ ॥ मुष्टिमात्रप्रमाणेनच

गयाजीमें पायस (जावर) चरु सत्तू पिसान, चावल, फल, मूल तिल, सक्कर, घी, सहित गुण, अथवा दही, ऊर्ज, सहत, पाना, (चावलका होता है) अथवा सहित घीके माडही से जो पुरुष पिंडदान करते हैं वह समस्त पितरों के लिये अक्षय हो जाता है और उसीको हविष्यान्न पितर मानते हैं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ मूठी भर या आँवले के

प्रमाण ॥ ३४ ॥ अथवा शमीपत्र (छांकुर बृक्ष की पत्तीके) प्रमाण गया शिरमें पिण्डदान करनेसे सात गोत्र और एकसौ एक कुल मुक्त हो जाते हैं ॥ ३५ ॥ पिता, माता, स्त्री, बहिन, दमाद (जवाई) फूफू, मौसी, यह सात गोत्र है ॥ ३६ ॥ पितापक्ष के चौबिस पुरुष माता के बीस स्त्री के सोलह, दमाद के बारह, फूफू, के ग्यारह मौसी के दश पुरुष

द्रामलकमात्रकम् ॥ ३४ ॥ शमीपत्रप्रमाणेनपिंडंदद्याद्गयाशिरे ॥ उद्धरेत्सप्तगोत्राणिकुलमेकोत्तरंशतम् ॥ ॥ ३५ ॥ पितामाताचभार्याचभगिनीदुहितुःपति ॥ पितृष्वसामातृष्वसासप्तगोत्राणितारयत ॥३६॥ चतुर्विंशश्चविंशश्चषोडशद्वादशैवहि ॥ रुद्रादशवसुश्चैवकुलमेकोत्तरंशतम् ॥ ३७ ॥ एकतः सर्ववस्तूनिरसवंतिमधूनिहि ॥ स्मृत्वागदाधरंध्रुयज्जंफल्गुतीर्थाम्बुचैकतः ३८ ॥ नावाहनंनदिग्बंधोनदोषोदृष्टिसंभवः ॥ सकारुण्येनकर्तव्यंतीर्थश्राद्धंविचक्षणैः ॥ ३९ ॥ पिण्डासनंपिंडदानंपुनः प्रत्यवनेजनम् ॥ द-

यह एकसौ एक कुल हैं ॥ ३७ ॥ गया में जाकर जितनी रस बस्तुयें हैं उनको गदाधर भगवानका ध्यान करके और गया के सब तीर्थों के जलको इकट्ठा करैं ॥ ३८ ॥ गया श्राद्ध में न तो आवाहन न दिग्बन्ध द्रष्टि दोष नहीं करना केवल श्रद्धा [illegible] दयाभाव से युक्त बुद्धिमान करके श्राद्ध करना चाहिये ॥ ३९ ॥ पिण्डासन पिण्डदान प्रत्यवनेजन, दक्षिणा अन्न

ऐसे यही तीर्थ श्राद्ध की विधि है ॥ ४० ॥ श्री गया तीर्थ में आये हुये पुत्रको देखकर पितर सदैव स्वयं आजाते हैं ॥ ४१ ॥ फलकी इच्छा करके गया यात्रा करने वाले ॥ ४२ ॥ काम क्रोध लोभ मोह अकार्य क्रिया त्याग करके ब्रह्मचर्य हो एक वार भोजन करते हुये पृथ्वी में शयन करै और सत्य बोलता रहै पवित्र रहै ॥ ४३ ॥ सम्पूर्ण प्राणियों

क्षिणाचान्नसंकल्पस्तीर्थश्राद्धेष्वयंविधिः ॥ ४० ॥ अन्यत्रावाहिताः कालेपितरोयांत्यमुप्रति ॥ अत्राग तंसुतंदृष्ट्वास्वयमायांतिसर्वथा ॥ ४१ ॥ तीर्थश्राद्धंप्रयच्छाद्भिः पुरुषः फलकांक्षिभिः ॥४२॥ कामंक्रोधंत थालोभंत्यक्त्वाकार्याऽदिकाः क्रियाः ॥ ब्रह्मचार्येकभोजीचभूशायीसत्यवाक्छुचिः ॥ ४३ ॥ सर्वभूतहि तेरक्तः सतीर्थफलमश्नुते ॥ तीर्थान्यनुसरन्धीरः पाखंडंपूर्वतस्त्यजेत् ॥ ४४ ॥ पाखंडंतच्चविज्ञेयंयद्भवे त्कर्मकामतः ॥ तीर्थेषुयेनराधीरः कर्मकुर्वंतितद्गताः ॥ ४५ ॥ यथाब्रह्मविदोवेद्यंवस्तुवानन्यचेतसः ॥

का हितचाहै वह तीर्थ फलको प्राप्त करता है पाखण्ड आदिक प्रथमही त्याग कर देवै ॥४४॥ गया तीर्थ में जाकर वही पाखण्ड ग्रहण करै जो वहांपर उचित है धीर मनुष्य जिस तीर्थ में जांय उसी तीर्थ में श्रद्धा भक्ति युक्त होकर कर्म करै ॥ ४५ ॥ जिस प्रकार ब्रह्मवेत्ता ब्रह्ममें मन लगाकर परब्रह्म में प्रवेश करते हैं उसी प्रकार तन्मय हो जाना चाहिये ॥ ४६ ॥

गया में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां पर तीर्थ न होवे समस्त तीर्थों से श्रेष्ठ गया तीर्थ है ॥ ५७ ॥ मीन मेष कन्या धन और कुम्भ के सूर्यों में गया श्राद्ध करना अति दुर्लभ है ॥ ४८ ॥ मकर के सूर्य में अथवा चन्द्र सूर्य के ग्रहण समय गया में पिण्डदान करना अति दुर्लभ है ॥ ४९ ॥ सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे परमर्षि गयाजी में पिण्डदान करने से जो

प्रविशंति परेसांख्यंब्रह्मब्रह्मपरायणाः ॥ ४६ ॥ गयायांनहितत्स्थानंयत्रतीर्थनविद्यते ॥ सान्निध्यंसर्वतीर्थानांगयातीर्थंततोवरम् ॥ ४७ ॥ मीनेमेषेस्थितेसूर्येकन्यायांकार्मुकेघटे ॥ दुर्लभंत्रिषुलोकेषुगयायांपिंडपातनम् ॥ ४८ ॥ मकरेवर्तमानेचग्रहणेचंद्रसूर्ययोः ॥ दुर्लभंत्रिषुलोकेषुगयायांपिंडपातनम् ॥ ४९ ॥ गयायां पिंडदानेन यत्फलं लभते नरः ॥ नतच्छक्यं मयावक्तुंकल्पकोटि शतैरपि ॥ ५० ॥ इति श्रीवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पे गयामाहात्म्ये प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

मनुष्यों को फल प्राप्त होता है उसके माहात्म्य को कोटि कल्पतक मैं वर्णन करूं तो भी मेरा सामार्थ्य नहीं है ॥ ५० ॥ इति श्री उन्नाव प्रदेशान्तगर्त बरौंडा ग्राम निवासी पं० आनंदमाधव दीक्षितात्मज पं० महाराजदीन दीक्षित कृत भाषाविवृत्यां प्रथमो ऽध्यायः ॥ १ ॥

श्री नारदजी बोले कि हे सनत्कुमार ! किस प्रकार गयासुर उत्पन्न हुआ उसका क्या प्रभाव और क्या तपस्या उस ने किया ? किस प्रकार उसकी देह पवित्र हुई ॥ १ ॥ सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ! सुनो प्रथम सृष्टि रचना के समय विष्णुकी नाभि से कमल उत्पन्न हुआ उससे ब्रह्माजी प्रगट हुये सो ब्रह्माने विष्णु की आज्ञासे सृष्टि रचना किया

॥ नारदउवाच ॥ गयासुरःकथंजातःप्रभावःकिं किमात्मकः ॥ तपस्तप्तंकथंतेनकथंदेहपवित्रता ॥ १ ॥ सनत्कुमारउवाच ॥ विष्णोर्नाभ्यंयुजाज्जातोब्रह्मालोकपितामहः ॥ प्रजाः सृजतिसंप्रोक्तः पूर्वंदेवेनाविष्णुना ॥ २ ॥ आसुरेणैवभावेनह्यसुरानसृजत्पुरा ॥ सौमनस्येनभावेनदेवान्सुमनसोसृजत् ॥ ३ ॥ गयासुरः सुराणांचमहाबलपराक्रमः ॥ योयनानांसपादंचशतंतस्योच्चयः स्मृतः ॥ ४ ॥ स्थूलः षष्टिर्योजनानांश्रेष्ठोसौवैष्णवःस्मृतः ॥ कोलाहलेगिरिवरेतपस्तेपसुदारुणम् ॥ ५ ॥ बहुवर्ष सहस्राणिनिरुच्छ्वासः

॥ २ ॥ असुरी भावसे असुरों को सुमन भाव से देवतों को रचा ॥ ३ ॥ तो देवतों के मध्यमें गयासुर अति पराक्रमी सवा सौ योजन ऊंचा साठि योजन का मोटा देवतों में श्रेष्ठ उत्पन्न हुआ तो उस गयासुर ने कोलाहल पर्वत पर जाकर घोर तपको करने लगा ॥ ४ ॥ ५ ॥ अनेक हजार वर्ष श्वास को रोकर खड़ा रहा तो उसकी तपस्या से देवता

लोग क्षोभ (घबड़ा गये) को प्राप्त हुये ॥ ६ ॥ देवता लोग घबड़ाकर ब्रह्मा की शरण गये और बोले कि गयासुर से मेरी रक्षा कीजिये तो ब्रम्हाने कहा कि ॥ ७ ॥ हम सब लोग श्रीशंकरजीके शरण चलैं यह कहकर सब देवता महादेव के पास गये और बोलेकि महासुर गयासुर से हम लोगों की रक्षा करिये ॥ ८ ॥ तब महादेवजी बोले कि हम सब लोग

स्थिरोभवत् ॥ तत्तपस्तपितादेवाः संक्षोभंपरमंगताः ॥ ६ ॥ ब्रह्मलोकंगतादेवाःप्रोचुस्तेथपितामहत् ॥ गयासुराद्रक्षदेवब्रह्मादेवांस्तथब्रवीत् ॥ ७ ॥ ब्रजामः शंकरंदेवाब्रह्माद्याश्चगताः शिवम् ॥ कैलासे-चाब्रुवन्नात्वारक्षरक्षमहासुरात् ॥ ८ ॥ ब्रम्हाद्यांश्चब्रवीच्छंभुंब्रजामः शरणंहरिम् ॥ क्षीराब्धौदेवदेवेशः सनःश्रेयोभिधास्यति ॥ ९ ॥ ब्रम्हामहेश्वरौदेवोविष्णुंनत्वाप्रतुष्ठुवुः ॥ १० ॥ देवाऊचुः ॥ ओंनमोविष्णवेभूभर्त्रेसर्वेषांप्रभाविष्णवे ॥ रोचिष्णवेजिष्णवेचराक्षसादिग्रसिष्णवे ॥११॥ धरिष्णवेखिलस्यांस्ययोगिनां

क्षीर सागर में शयन करने वाले हरि विष्णु की शरण चलैं उन्हीं से हम लोगों का कल्याण होगा ॥ ९ ॥ यह कहकर शंकर के साथ ब्रम्हादि देवता क्षीरसागर में जाकर देव देव विष्णु की स्तुति करने लगे ॥ १० ॥ देवता लोग बोलेकि विष्णु ! हे पृथ्वी के धारण करने वाले हे समस्त प्राणियों के उत्पत्ति करने वाले आपको नमस्कार है। हे तेज स्वरुप

पारहृष्णवे ॥ बर्हिष्णवेह्यनंतायनमोभ्राजिष्णवेनमः ॥ १२ ॥ सनत्कुमारउवाच ॥ एवंस्तुतोवासुदेवःसुराणांदर्शनं ददौ ॥ १३ ॥ किमर्थमागतादेवाः विष्णुनोक्तास्तमब्रुवन् ॥ गयासुरभयाद्देवरक्षास्मानब्रवीद्धरिः ॥ १४ ॥ ब्रम्हाद्यायांतुतंदैत्यंचागमिष्याम्यहंततः ॥ केशवोगरुडारूढोवरंदातुंगयासुरम् ॥ १५ ॥ सर्वेस्वंस्वंसमास्थायनिजवाहनमुत्तमम् ॥ ऊचुस्तंवासुदेवाद्याःकिमर्थंतप्यतेत्वया ॥ १६ ॥ संतुष्टाश्चागताःसर्वे

ऐन्द्रिदल के नाश करने वाले, हे राक्षसगणों के ग्रास करनें वाले समस्त भूमंडल के पालन करने वाले, योगीजनों को पार करने वाले आपको नमस्कार है हे ब्रम्हस्वरूप हे अनन्तदेव आपको नमस्कार है ॥ ११ ॥ १२ ॥ सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद। इस प्रकार देवतों की स्तुति करने पर वासुदेव, भगवान देवतों को दर्शन देते भये ॥ १३ ॥ और बोले कि आप लोग किस हेतु आये हैं सो हमसे कहिये? देवता बोले कि हम लोगों को गयासुर के भयसे रक्षा करो तब भगवान बोले कि ॥ १३ ॥ आप लोग गयासुर के पास चलिये पीछे से हम भी गरुड़ पर स्थितहोकर वर देनेके लिये आतेहैं ॥ १५ ॥ निदान सब देवता व विष्णु निज २ वाहनों में स्थित होकर गयासुर के पास जाकर बोले कि तुम किस लिये तपस्या करते हो? ॥ १६ ॥ हम सब लोग आप से प्रसन्न हैं हे गयासुर? तुम वरको मांगो, गयासुर बोला कि यदि

ब्रह्मा विष्णु महादेव आदिक देवता मेरे पर प्रसन्न हैं तो ॥ १७ ॥ यह वर दीजिये कि सम्पूर्ण देवता ब्राह्मण यज्ञ तीर्थ पवित्र शिला और ऋषियों से श्रेष्ठ अविनाशी शिवजी से अपने धर्म में रत ब्राह्मणों से श्रेष्ठ मंत्रों से भी श्रेष्ठ गिना जाऊं ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ तब विष्णु ने एव मस्तु कहकर सब देवता निज २ स्थानों को चल दिये तबसे गयासुर के दर्शन से ही सब

वरंब्रूहिगयासुर ॥ गयासुर उवाच ॥ ॥ यदितुष्टाश्चमेदेवाब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ १७ ॥ सर्वदेवद्विजतिभ्यो यज्ञतीर्थशिलोच्चयात् ॥ देवेभ्योतिपवित्रोहमृषिभ्योपिशिवाव्ययात् ॥ १८ ॥ पवित्रमस्तुतंदेवादैत्यभ्योधार्मिभ्यश्चतथापुनः ॥ मंत्रिभ्योतिपवित्रोहंपवित्रोभवभोःसदा ॥ १९ ॥ पवित्रमस्तुतंदेवादैत्यमुक्त्वाययुर्दिवम् ॥ दृष्ट्वादैत्यंततःस्पृष्टासर्वेहरिपरंययुः ॥२०॥ शून्यलोकत्रयेजातेशून्यायमपरीह्यभूत ॥ यमइंद्रादिभिःसार्धंब्रह्मलोकंततोऽगमत् ॥ २१ ॥ ब्रह्माणमूचिरेदेवागयासुरविलोपिताः ॥ त्वयादत्तोधिका

मनुष्य स्वर्ग जाने लगे ॥ २० ॥ और यमपुरी शून्य होगई तो इन्द्रादि देवतों को साथ में लेकर यमराज ब्रह्म लोक को गये ॥ २१ ॥ और बोले कि आपके वर देने से गयासु के दर्शन स्पर्श से सम्पूर्ण प्राणी स्वर्ग को जाते हैं और हमारी पुरी [illegible] होगई इससे आप अपने दिये वर को फेर लीजिये ॥ २२ ॥ तब ब्रह्माजी बोले कि हम सब लोग विष्णु की शरण चले

ऐसे
... कहकर विष्णु के पास गये और कहा कि आपके दरदेने से गयासुर के दर्शनसे स्पर्शसे और तीनों लोक शून्य होगये इसलि-
ये हम लोगो की रक्षा करिये ब्रह्माके वचन सुनकर भगवान बोले कि ॥ २६ ॥ २४ ॥ आपलोग गयासुर के पास जाकर
यज्ञार्थ देह मांगिये विष्णु के वचन सुनकर सहित देवताके ब्रह्मा उस गयासुर के पास गये ॥ २९ ॥ गयासुर ब्रह्मादि

रोवैत्वंगृहाणपितामह ॥ २२ ॥ ब्रह्माब्रवीत्ततोदेवान्व्रजामोविष्णुमव्ययम् ॥ ब्रह्मादयोऽब्रुवन्विष्णुंत्व
याद्त्तवरोऽसुरः ॥ २३ ॥ तद्दर्शनाद्यपुः स्वर्गेशून्यंलोकत्रयंह्यभूत ॥ देवैस्तुष्टोवासुदेवोब्रह्माणं
सवचोऽब्रवीत् ॥ २४ ॥ गत्वासुरम्प्रार्थयस्वयज्ञार्थं देहिदेहकम् ॥ विष्णूक्तःसमुरोब्रह्मागत्वापश्यन्महा
सुरम् ॥ २५ ॥ गयासुरोऽब्रवीद्दृष्ट्वाब्रह्माणंत्रिदशैःसह ॥ संपूज्योत्थायविधिवत्प्रणतःप्रश्रयान्वितः ॥

देवताओंको भाएहुए देखकर उठकर प्रणाम किया और नम्रता युक्त वचन बोलाकि॥२६॥आज मेरा जन्म और तपस्या सफल
हुई जो ब्रह्मादि देवता मेरे यहां अतिथि होकर आये ॥ २७ ॥ हे योगिन् ! योग के जानने वाले संसार के स्वामी पितर

गुरु आप जिस हेतु आये हो सो कहिये ? हे ब्रह्मन् हम आपका क्या कार्य करें ॥ २८ ॥ ब्रह्माजी बोले कि हम समस्त भू
मण्डल में जितने तीर्थ हैं उनको देख आये परन्तु आपकी देहकी सदृश पवित्र स्थान यज्ञ के लिये कोई नहीं है ॥२९॥ आपकी
देह विष्णु के वर देने से अति पवित्र है सो हे असुर ! यज्ञ के लिये आप अपना देह दीजिये ॥ ३० ॥ गयासुर बोला

२६ ॥ गयासुरउवाच ॥ अद्यमेसफलंजन्मअद्यमेसफलंतपः ॥ यदागतोतिथिर्ब्रह्मासर्वं प्राप्तंममाद्यवै ॥
२७ ॥ योगिन्योगांगवित्सर्वलोकस्वामिन्पितर्गुरो ॥ यदर्थमागतो ब्रह्मंस्तत्कार्यंकरवाण्यहम् ॥ २८ ॥
ब्रह्मोवाच ॥ पृथिव्यांयानितीर्थानि दृष्टानिभ्रमतामया ॥ यज्ञार्थंनतुतेतानिपवित्राणिशरीरतः ॥ २९ ॥
त्वयादेहपवित्रत्वप्राप्यविष्णुप्रसादतः ॥ अतःपवित्रंदेहंस्वंयज्ञार्थंदेहिमेसुर ॥ ३० ॥ गयासुरउवाच ॥
धन्योहंदेवदेवेशयद्देहःप्रार्थ्यतेत्वया ॥ पितृवंशेकृतार्थोहंमातृवंशेतथैवच ॥ ३१ ॥ त्वयैवोत्पादितोदेहः

कि आज आपको मेरा देह मांगने से हे देवदेव ! मैं अति धन्य हुआ आज मैं पितृवंश में और मातृ वंशमें आप के प्रसाद
[illegible]र्थ हुआ ॥ ३१ ॥ आप ही से यह देह आपही करके पवित्र हुई है सो सबके उपकारार्थ अवश्य आप यज्ञ करें

॥ यह कहकर वह गयासुर श्वेत कल्प में पृथ्वीपर नैर्ऋत्य दिशामें गिरपड़ा ॥ ३३ ॥ उत्तर की तरफ शिर दक्षिण ऐं चरण करके गिरा और ब्रह्माने अग्निशर्मा अमृत, शौनक, कौण्डिन्य, हारीत, काश्यप, कृप, गार्ग्य, विश्वामित्र, व-

प वित्रस्तुत्वयाकृतः ॥ सर्वेषामुपकारायययागोऽवश्यंभविस्यति ॥ ३२ ॥ इत्युक्त्वसोपतद्भूमौश्वेतकल्पेग यासुरः ॥ नैर्ऋतींदिशमाश्रित्यतदोकालाहलेगिरौ ॥ ३३ ॥ शिरःकृत्वोत्तरेदैत्यःपादौकृत्वातुदक्षिणे ॥ ब्रह्मासंभृतसंभारान्मानसानृत्विजोऽसृजत ॥ ३४ ॥ अग्निशर्माणममृतंशौनकंपांजालिंमृदुम् ॥ कुमथिं वेदकौडिन्यंहारीतंकाश्यपंकृपम् ॥ ३५ ॥ गार्ग्यकौशिकवासिष्ठंमुनिंभार्गवमव्ययम् ॥ वृद्धंपाराशरंका ण्वंमांडव्यंश्रुतिकेवलम् ॥ ३६ ॥ श्वेतंसुतालंदमनंकुहोत्रंकर्कमेवच ॥ लौगाक्षिंचमहाबाहुंजैगीषव्यंतथैव च ३७दधिपंचमुवंविप्रऋषभंकर्कमेवच ॥ कात्यायनंगोभिलंचमुनिमिश्रंमहाव्रतम् ॥३८॥सुपालकंगौतमंच

सिष्ठ, भार्गव वृद्धपाराशर, काण्व, माण्डव्य, श्वेत, सुताल, दमन, कुहोत्र, कर्क, लौगाक्षि, महाबाहु, जैगीषव्य, दधीच, मुव, विप्रर्षभ, कात्यायन, गोभिल, मुनिमिश्र, महाव्रत, सुपालक, गौतम, जटामाली, चाट्टहास, अत्रेय, अंगिरा, उपमन्यु

गोकर्ण, शिखण्डी, और उमावत आदि महर्षि विप्रर्षि देवर्षियों का और ब्राह्मणों को बुलाकर वेद विहित यज्ञ ब्रह्मा ने गयासुर के शरीर पर किया ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥

तथावेदशिरोव्रतम् ॥ जटामालिनमव्यग्रंचाट्टहासंचदारुणम् ॥ ३९ ॥ आत्रेयंचाप्यांगिरसंभौपमन्युंमहाव्रतम् ॥ गोकर्णंचशुहावासंशिखंडिनमुमाव्रतम् ॥ ४० ॥ एतानन्यांश्चविप्रेंद्रान्देवलोकपितामहः ॥ परिकल्प्याकरोद्यागंगयासुरशरीरके ॥ ४१ ॥ अग्निशर्मापिपंचाग्नीन्मुखादेतानथासृजत ॥ दक्षिणाग्निं गार्हपत्यमाहवनीयंतपोमयः ॥ ४२ ॥ सभ्यावसथ्यौदेवर्षेयेष्वयज्ञाःप्रकीर्तिताः ॥ यज्ञस्तत्प्रतिष्ठार्थंविप्रेभ्योदक्षिणांददौ ॥ ४३ ॥ हुत्वापूर्णाहुतिंब्रह्मास्नात्वाचावभृथेऽसुरम् ॥ यज्ञवाटेसुरैःसार्द्धंसमानीयव्यरोपयत ॥ ४४ ॥ ब्रह्मणःसरसिश्रेष्ठेतदादैत्योमहासुरः ॥ चलितश्चाकितोब्रह्माधर्मराजमभाषत ॥ ४५ ॥

अग्नि शर्मा ऋषि ने निज मुख से गार्हपत्य आहवनीय तपो मय आदि इन की अग्नि को प्रकट किया और इन की प्रतिष्ठाय ब्राह्मणों को दक्षिणा दी गई ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ फिर ब्रह्मा जी यज्ञान्त स्नान करके देवता सहित यज्ञ बाटमें [illegible]स्थित हुये ॥ ४४ ॥ तो उसी समय गयासुर की देह हिलने लगी ब्रह्माजी उस को हिलते हुए देखकर आश्चर्यित होकर

धर्मराज से बोले कि ॥ ४५ ॥ हे धर्मराज ! तुम शीघ्र निज घरसे पत्थर की शिला लाकर मेरी आज्ञा से गयासुरके
पर रखदो ॥ ४६ ॥ ब्रह्माकी आज्ञासे धर्मराज शिला लाकर दैत्यके शिरमे रखदिया परन्तु वह शिला सहित भी हिलता
ही रहा ॥ ४७ ॥ इस प्रकार देवता लोग निज चरण से दैत्य को हिलते हुए जानकर विष्णु भगवान् की शरण क्षीर सा

जाताशृहेतवशिलातामानीयाज्ञधारय ॥ दैत्यस्यशीघ्रंशिरसितांधारयममाज्ञया ॥ ४६ ॥ निश्चलार्थंयमः
श्रुत्वाधारयन्मस्तकेशिलाम् ॥ शिलायांधारितायांतुसशिलश्चासुरोऽचलत ॥ ४७ ॥ देवाःपादैर्लक्षयित्वा
तथापिचालितोऽसुरः ॥ ब्रह्माथव्याकुलोविष्णुंगतःक्षीराब्धिशायिनम् ॥ तुष्टावप्रणतोभूत्वानत्वाचाहहत
प्रभुम् ॥ ४८ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ ब्रह्माण्डस्यपतेनाथनमामिजगतांपतिम् ॥४९॥ पतिंकीर्तिमतांनृणांभुक्तिमुक्तिप्रदा
यकम् ॥ विष्वक्सेनोऽब्रवीद्विष्णुंदेवत्वांस्तौतिपद्मजः ॥ ५० ॥ हरिराहानयस्वत्वं विष्णुक्तः सतमानय

गर को गये ॥ ४८ ॥ नम्र होकर प्रणाम किया और प्रभुकी स्तुति करने लगे ब्रह्माजी बोले कि हे ब्रह्माण्ड के स्वामी जगत्
(संसार) के अधिपति हम आप को नमस्कार करते हैं ॥ ४९ ॥ कीर्ति मनुष्यों के पति भुक्ति मुक्ति देने वाले आपको
नमस्कार हैं । इस स्तुति को विष्वक्सेन सुनकर विष्णु से बोले कि हे देव ! आप की स्तुति ब्रह्माजी कररहे हैं ॥ ५० ॥

विष्णु ने कहा कि हमारे पास बुलालाओ तब विष्णु की आज्ञा से ब्रह्मा जी भगवान् के पास गये हरिने कहा कि आप हमारे पास किस लिये आयेहो सो कहिये ? ॥ ५१ ॥ ब्रह्माने कहा कि हे देवदेव ? यज्ञ करने के बाद गयासुर फिर हिलने लगा उसके शिरपर देवरूपी शिला भी रक्खीगई तब भी वह चलताही है ॥ ५२ ॥ और रुद्रादिक देवता भी उस पर स्थित

त ॥ अजमूचेहरिःकस्मादागतोऽसिवदस्वतत् ॥ ५१ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ ॥ देवदेवकृतेयागेभ्रचचालगयासुरः ॥ शिलायांदेवरूपिण्यांन्यस्तायांतस्यमस्तके ॥ ५२ ॥ रुद्रादिषुचदेवेषुसंस्थितेष्वसुरोऽचलत् ॥ इदानींनिश्चलार्थंहिप्रसादंकुरुमाधव ॥ ५३ ॥ ब्रह्मणोवचनंश्रुत्वाह्याकृष्यस्वशरीरतः ॥ मूर्तिंददौनिश्चलार्थंब्रह्मणेभगवन्हरिः ॥ ५४ ॥ आनीयमूर्तिंब्रह्मापिशिलायांसमधारयत् ॥ तथापिचलितंवीक्ष्यपनर्देवमिहाह्वयत् ॥ ५५ ॥ आगत्याविष्णुःक्षीराब्धेःशिलायांसंस्थितोऽभवत् ॥ जनार्दनाभिधानेनपुंडरीकाक्ष

हुये तो भी वह चलताहीरहा इस लिये हम आये हैं कि हे माधव! उसको निश्चल करिये॥५३॥यह ब्रह्मा के वचन सुनकर भगवान् जीने शरीरसे एक मूर्तिको निकाल कर ब्रह्माको दिया ५४ उसमूर्ति को लेकर ब्रह्मा शिलापर रखदेते भये तबभी उसको हिलते हुये देखकर ब्रह्माने विष्णुको आवाहन किया५५॥ तो भगवान् जनार्दन पुण्डरी काक्ष नामसे आकर शिलापर स्वास्थवहुये ५६

और ब्रह्मा भी पितामहैं, प्रपितामह, फल्गवीश, केदार, कनकेश्वर, यह पांच रूपधारण करके शिलापर स्थितहुये और गजरूप धारण करके गणेशजी स्थित हुए ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ वहीं पर गयादित्य उत्तरार्क दक्षिणाके तीन नामसे और शान्ता नाम से लक्ष्मीजी स्थित हुई ॥ ५९ ॥ गायत्री, सावित्री, त्रिसन्ध्या नामसे सरस्वतीजी और इन्द्र बृहस्पति, पूषा, आठो वसु,

मामतः ॥ ३६ ॥ शिलायांनिश्चलार्थंहिस्वयमादिगदाधरः ॥ निश्चलार्थंपंचधासीच्छिलायांप्रपितामहः ॥ ५७ ॥ पितामहोऽथफल्गवीशः केदारःकनकेश्वरः ॥ ब्रह्मास्थितःस्वयंतत्रगजरूपीविनायकः ॥ ५८ ॥ गयादित्यश्चोत्तरार्कोदक्षिणार्कस्त्रिधारविः ॥ लक्ष्मीःशांताभिधानेनस्थितावमंगलाह्वया ॥ ५९ ॥ गायत्रीचैवसावित्रीत्रिसंध्यायसरस्वती ॥ इन्द्रोबृहस्पतिः पूषावसवोष्टौमुनीश्वराः ॥ ६० ॥ विश्वेदेवा अश्विनौचमरुतोविश्वनायकः ॥ सयक्षोरगगंधर्वास्तस्थुर्देवाः स्वशक्तितः ॥ १६ ॥ आद्ययागदयाचासौयस्मा

विश्वेदेवा मुनीश्वर अश्विनी कुमार, संसार का नायक वायु, यक्ष, गन्धर्व और इतर सब देवता निज २ शक्तियों से युक्त गयासुर के शिर पर स्थित हुये ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ गदा को धारण कीये भगवान् ने गयासुरको स्थिर किया इसी

सेआदि गदाधर नाम से प्रसिद्ध हुवे ॥ ६२ ॥ गयासुर देवता सें बोला कि मैं किस लिये ठहराया गया हुं ? मैंने निज शरीर को यज्ञार्थ ब्रह्माको दिया है ॥ ६३ ॥ अब हम विष्णु के वचन से व देवता और गदा से हम अति दबाये गये है ॥ ६४ ॥ इस से आप लोग मुझपर प्रसन्न होइये तब देवता और विष्णु प्रसन्न होकर बोले कि ॥ ६५ ॥ हम प्रसन्न

दैत्यःस्थिरीकृतः ॥ स्थितइत्येवहारिणातस्मादादिगदाधर ॥ ६२ ॥ ऊचेगयासुरोदेवान्किमर्थंवंचितो ह्यहम् ॥ यज्ञार्थंब्रह्मणेदत्तंशरीरममलंमया ॥ ६३ ॥ विष्णोर्वचनमात्रेणाकिंनस्यान्निश्चलोह्यहम् ॥ यत्सुरैः पीडितोत्यर्थंगदयाहरिणातथा ॥ ६४ ॥ पीड्यश्चयद्यहंदेवाःप्रसन्नाःसतुसर्वदा ॥ गदाधरायथेतुष्टाः प्रो-चुश्चापिगयासुरम् ॥ ६५ ॥ वरंब्रूहिप्रसन्नाःस्मोदेवानूचेगयासुरः ॥ ॥ गयासुरउवाच ॥ यावत्पृथ्वीपर्वताश्चयावच्चंद्रार्कतारकाः ॥ ६६ ॥ तावच्छिलायांतिष्ठंब्रह्माविष्णुमहेस्वराः ॥ अन्येचसकलादेवामन्ना

हैं वर को मांगो गयासुर बोला कि जबतक पृथ्वी पर्वत चन्द्रमा सूर्य नक्षत्र रहै ॥ ६६ ॥ तबतक ब्रह्मा विष्णु महादेव इस शिला पर स्थित रहैं और हमारे नाम से यह तीर्थ प्रसिद्ध होवे ॥ ६७ ॥ पांच कोस में यह गया क्षेत्र एक कोस में

गया तीर्थ काशिर इसके मध्य में जितने त्रैलोक्य के तीर्थहै वह सब स्थित होवेह६८॥गंगादिक महानदी महान, देवता और वा मनुष्यों के हित करैं।६९॥जबतक ब्रह्मा।विष्णु महादेव तीनों देवता एक नामसे कहे जावें तब तक यह इस गया क्षेत्रमें स्नान पिण्डदान तर्पण और दानादिक करनेसे बाधके फल होवे७०॥और तथा तक पृथ्वी में हजारन कुलोंके उद्धारकरने वाला यह

म्नाक्षेत्रमस्तुवै ॥ ६७ ॥ पंचक्रोशंगयाक्षेत्रंक्रोशंमेकंगयाशिरः ॥ तुन्मध्येसर्वतीर्थानित्रैलोक्ययानितो निवै ॥ ६८ ॥ गंगाद्याःसुमहानद्यःसरांसिविविधानिच ॥ तेदेवास्तानितीर्थानिप्रयच्छंतुहितंनृणां ॥ ६९ ॥ स्नानादितर्पणंकृत्वापिंडदानात्फलादिकम् ॥ एकोविष्णुस्त्रिधामूर्तिर्यावत्संकीर्त्यतेबुधैः ॥ ७० ॥ तावद्गयाशिरः क्षेत्रंख्यातिमेतुसदाभुवि ॥ सहात्मानंसहस्रंचकुलानांचोद्धरेत्तुसः ॥ ७१ ॥ व्यक्ताव्यक्तस्वरूपेणयूयंतिष्ठंतुर्वदा गदाधरःस्वयंलोकान्पूजनादघनाशनः ॥ ७२ ॥ श्राद्धंसपिंडकं

गया शिरक्षेत्र कहा जावे ॥ ७१ ॥ प्रगट और अप्रगट रूपसे आप सब लोग यहां पर स्थित रहै और जिनके पूजनसे पापका नाश होवे ॥ ७२ ॥ यहां के श्राद्ध पिण्डदान करने वाले ब्रह्मलोक को चले जावे और वास करने वालों के ब्रह्महत्या

दि पाप नाश होवे ॥ ७३ ॥ यहांपर मुक्ति के देने वाले नैमिष पुष्कर, गंगा, प्रयाग, और जितने अन्त रिक्षण तीर्थ हैं वह सब यहांपर रहे और मनुष्यों का हित करैं मैं कहां तक कहूं यदि आप लोग एक भी देवता यहांपर न रहेंगे तो ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ मैं भी यहां न स्थित रहूंगा यह गया सुरके वचन सुनकर विष्णु आदिक देवता बोले कि ॥ ७६ ॥ हे

येषांब्रह्मलोकंप्रयांतुते ॥ ब्रह्महत्यादिकंपापंविनस्यतिचसेविनाम् ॥ ७३ ॥ नैमिषंपुष्करंगंगांप्रयागंच विमुक्तिदम् ॥ एतान्यन्यानितीर्थानिदिविभुव्यंतुरिक्षतः ॥ ७४ ॥ समायांतुसदानृणांश्रयच्छंतुहितंनृ-णाम् ॥ किंबहूक्त्यासुरेशानायुष्मास्वेकापिदेवता ॥ ७५ ॥ चेन्नातिष्ठेद्दहंचापिसमयःप्रतिपाल्यताम् ॥ गयासुरवचः श्रुत्वाप्रोचुर्विष्ण्वादयःसुराः ॥ ७६ ॥ त्वयायत्प्रार्थितंसर्वंतद्भविष्यत्यसंशयम् ॥ पितृणांवै कुलशतमात्मानंपिंडदानतः ॥ ७७ ॥ श्राद्धादिनानायिष्यंतिब्रह्मलोकमनामयम् ॥ अस्मत्पदार्चायि

गयासुर ! जो तुमने कहा वह अवश्य होगा यहां के पिण्डदान करने से एकसौ कुल के पितर ब्रह्म लोक को जांयगे हमलोग के पूजन से परमगति मिलेगा ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ देवता ओंसे वर पाकर गयासुर अति प्रसन्न होकर स्थित हुआ और

ब्रह्माने ब्राह्मणों को बहुत दान दिया ॥ ७९ ॥ गया क्षेत्र में पांच कोस के अन्दर में सुन्दर बनेहुये पचपन मकान दिव्य सामग्री से युक्त काम धेनु कल्प वृक्ष, पारिजातादिक वृक्ष घी दूध शहद के बहने वाली नदी, दही घांसे भरे हुये तालाब, सुवर्ण की बावली अन्नादिक के पर्वत, भक्ष्य भोज्य पदार्थ, फलादिक उत्पन्न करके ब्रह्माने ब्राह्मणों को द्रव्य

त्वायास्यंतिपरमांगतिम् ॥ ७८ ॥ देवैर्दत्तवरोदैत्योहर्षितोनिश्चलोऽभवत् ॥ स्थितेषुचैवदेवेषुब्राह्मणेभ्यो ददौब्रह्मजः ॥ ७९ ॥ ग्रामास्तुपंचपंचाशत्पंचक्रोशंगयांतथा ॥ गृहान्कृत्वाददौदिव्यान्सर्वोपस्करसंयुतान् ॥ ८० ॥ कामधेनुंकल्पवृक्षंपारिजातादिकांस्तरून् ॥ महानदींक्षीरवाहांघृतकुल्यांतथैवच ॥ ८१ ॥ मधुस्रवांमधुकुल्यांदध्याज्यादिसरांसिच ॥ सुवर्णदीर्घिकांचैवबहूनन्नादिपर्वतान् ॥ ८२ ॥ भक्ष्यभोज्यफलादींश्चसर्वंब्रह्मासृजन्ददौ ॥ नयाचध्वंचविप्रेन्द्रा अन्यान्युक्त्वाददौब्रह्मजः ॥ ८३ ॥ दत्त्वययौब्रह्मलो

देकर बोले कि आजसे हे विप्रेन्द्र ! आप लोग किसीसे याचना न करना यह कह कर ब्रह्माजी गदाधर भगवान् को नमस्कार करके ब्रह्मलोक को चले गये ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ इसे के उपरान्त ब्राह्मणोंने धर्मेक्षत्र में धर्म यज्ञ

किया और लोभसे द्रव्यकी याचना किया और राजा ने बहुतसा धन ताम्बूल पंचरत्न दिया ॥ ८५ ॥ धर्म यज्ञ का धूआं स्वर्ग को गया तो ब्रह्माजी आकर ब्राह्मणों को शाप देदिया ॥ ८६ ॥ हमारे सम्पूर्ण पदार्थ देने परभी तुमने लोभ किया इससे भी द्विजाः आप लोगों को सदैव अधिक तृष्णा बनी रहेगी ॥ ८७ ॥ हमारी दिई हुई धन की नदी जल बहेगी

कंनत्वाह्यादिगदाधरम् ८४ धर्मारण्येतत्रधर्मयाजयित्वाययांजिरे। धर्मयागेचलोभाद्वैप्रतिगृह्यधनादिकम् ॥
तांबूलेपंचरत्नानिबलंनैवददौनृप ८५ धर्मयागस्यवैधूमेस्वर्गलोकंगतेसाति ।। ततोब्रह्मासमागत्य ब्राह्मणां-
स्ताञ्छशापह ८६ कृतवंतोयतोलोभंमद्दत्तेष्वखिलष्वाति ॥ तस्मात्तृष्णाधिकायूयंभविष्यथसदाद्विजाः ८७
युष्माकंवारिवाह्वास्यान्नदीपाषाणपर्वताः ॥ नद्यादयोवारिवाहाम्मृदाद्याःप्रचुरागृहाः ॥ ८८ ॥ कामधेनुः
कल्पवृक्षः स्वर्लोकमुपतिष्ठतु ॥ एवंशप्ताब्रह्मणातेप्रार्थयांतोब्रुवन्नजम् ॥ ८९ ॥ त्वयायद्दत्तमखिलंतत्सर्वंशा

अन्न के पर्वत पत्थर होजावै सुवर्णके मकान मट्टीके होजावेगे ॥ ८८ ॥ काम धेनु और कल्प वृक्ष स्वर्ग को चलेजायंगे [illegible] प्रकार के शापको पाकर ब्राह्मण लोग ब्रह्मासे बोले कि ॥ ८९ ॥ आपने जो कुछ दिया था वह नष्ट कर दिया

रंतु हम लोगों के जीविकार्थ उपाय बताने योग्य है आप बताईये ? ॥ ९० ॥ ब्रह्माजी ब्रह्मणों के बचन सुनकर दया युक्त बोले कि जबतक सूर्यचद्र पृथ्वी पर है तबतक यह तीर्थ जीविका होवैगी ॥ ९१ ॥ जो मनुष्य इस गया क्षेत्र में आकर श्राद्ध करेंगें वह ब्रह्मलोक को जावेंगे और आप लोगोंकी पूजा करेंगे वह मानो हमारा पूजन किया ॥९२॥ गयासुर के पटपरजो नाभि कूप है उसके निकट गिरजा

पतोगतम् ॥ जीवनार्थंप्रसादंनोभगवन्कर्तुमर्हसि ॥ १० ॥ तच्छ्रुत्वाब्राह्मणान्ब्रह्माप्रोवाचदययान्वितः ॥ तीर्थोपजीविकायूयमाचंद्रार्कंभविष्यथ ॥ ११ ॥ लोकाः पुण्यागयायांयेश्राद्धिनोब्रह्मलोकगाः ॥ युष्मान्येपूजयिष्यन्तितैरहंपूजितः सदा ॥ १२ ॥ आक्रांतदैत्यजठरंधर्मेणविरजाद्रिणा ॥ नाभिकूपसमीपेचदेवीचविरजास्थिता ॥ १३ ॥ तत्रपिंडादिकंकृत्वात्रिःसप्तकुलमुद्धरेत् ॥ माहेंद्रगिरिणातस्यकृतौपादौ सुनिश्चलौ ॥ १४ ॥ तत्रापिपिंडिकृत्सप्तकुलान्युद्धरतेनरः ॥ १५ ॥ इतिवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पे

देवी का स्थान है ॥ ९३ ॥ यहां पर पिण्डदान करने से इक्कीस कुल तक मनुष्य उद्धार करदेता है और गयासुर के पैर की जो महेन्द्र पर्वत से निश्चल किया गया है । ९४ ॥ वहां के पिण्ड दान करने से मनुष्य सात कुल को उद्धार कर देता है ॥ ९५ ॥ इति श्री चन्नाव प्रदेशान्तर्गत बरौड़ा ग्राम निवासी पं० आनन्द माधव दीक्षितात्मज पं० महाराज दीन दीक्षित कृतभाषा व्याख्याने द्वितीयोऽध्यायः॥२॥

नारदजी बोले कि हे सनत्कुमार जी ! गयासुर के शरीर पर जो शिला रक्खी गई उस के उत्पति रूप, महात्म्य, नाम सम्पूर्ण हम से वर्णन करिये ॥ १ ॥ सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ! पुण्य कथाको सुनो पूर्व समय अति ज्ञान तेजस्वी धर्म होते भये ॥ २ ॥

गयामाहात्म्ये द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥❀ ॥ ❀ ❀ ॥ ❀

॥ नारदउवाच ॥ कथंशिलासमुत्पन्नाययाक्रांतोगयासुरः ॥ किंरूपंकिंचमाहात्म्यं तस्याः किं वदनामच ॥ १ ॥ सनत्कुमारउवाच ॥ शृणुनारदयत्पुण्यंकथयामिपुनस्तव ॥ असीद्धर्मो महातेजः सर्व विज्ञानपारगः ॥२॥ विश्वरूपाचतत्पत्नीभर्तृव्रतपरायणा ॥ तस्यां धर्मात्समुत्पन्नाकन्याधर्मव्रतासती ॥ ३ ॥ सर्वलक्षणसंपन्नालक्ष्मीरिवगुणाधिका ॥ तस्यांये तुगुणाह्यासंस्तेन सन्ति जगत्त्रये ४ धर्मोधर्मव्रतीयांतुत्रिषु

उनको अति पतिव्रता विश्वरूपा नामक स्त्री थी उसी में धर्मके सकाश से धर्मव्रता कन्या उत्पन्न हुई ॥ ३ ॥ सर्व गुण सम्पन्न लक्ष्मी के तुल्य थी उस कन्या के सदृश दूसरी स्त्री न थी ॥ ४ ॥ जिस समय वह कन्या विवाह के योग्य हुई तब धर्मने त्रैलोक्य मे उसके योग्य वर ढूंढते भये परन्तु कन्या पिता के योग्य वर नहीं मिला ॥ ५ ॥

र्म कन्या से कहने लगे कि वर के लिये तू तप को कर । कन्या पिता के वचन मानकर वनमे चली गई वहां उस ने अति कृच्छ तप को करने लगी ॥ ६ ॥ हे नारद ! श्वेत कल्प में पूर्वही दशहजार वर्ष जिन्हांने वायु भक्षण करके तप

लोकेषुमार्गयन् ॥ नानुरूपंवरंलेभेधर्मोक्तावरसिद्धये ॥ ५ ॥ तपः कुरुवरार्थत्वंतथेत्युक्त्तावनंहयौ ॥ कन्या साचतपस्तेपेसर्वेषांदुस्तरंचयत् ॥ ६ ॥ वायुभक्षः श्वेतकल्पेयुगानामयुतंपुरा ॥ ब्रह्मणोमानसः पुत्रोमरीचिर्नामविश्रुतः ॥ ७ ॥ प्रवृत्तिलक्षणंधर्मंकर्तुंसब्रह्मणोरितः ॥ पर्यटन्पृथिवींसर्वान्कन्यारत्नंददर्शसः ॥ ८ ॥ रूपयौवनसंपन्नांपरमेतपसिस्थिताम् ॥ प्रपच्छाथमरीचिस्तांकात्वंकस्यासितद्वद ॥ ९ ॥ रूपेणानेनमां नूनंविमोहयसिसुव्रते ॥ ब्रह्मात्मजोहंविख्यातोमरीचिर्वेदपारगः ॥ १० ॥ मरीचेर्वचनंश्रुत्वाकन्याप्रोवा

किया है सोई ब्रह्मा के मानस पुत्र मरीची हुये ब्रह्मा की आज्ञा से गृहस्थ धर्म करने में आज्ञा ले घूमते २ उस कन्या को देखते भये ॥ ७ ॥ ८ ॥ रूप यौवन से सम्पन्न कन्या को देख कर पुछा की तू कौन है और किसकी कन्या है सो कहो ॥ १० ॥ हे सुव्रते ! इस रूप से तू ने हम को मोह लिया है हम ब्रह्मा के पुत्र वेद पारग मेरा मरीचि नाम है ॥ १० ॥ यह वचन

सुन कर कन्या बोली कि हमारा धर्म व्रता नाम है और तप युक्त धर्म की हम कन्या है ॥ ११ ॥ पिता के वचन से वर के लिये तप करती जब तक कार्य सिद्ध न होगा तब तक तप करती रहूंगी ॥ १२ । मरीचि यह वचन सुन कर अति प्रसन्न होकर धर्म व्रता से बोले कि हे शुभव्रते ! मेरे दर्शन से तेरा पतिव्रता धर्म सिद्ध हो जायगा ॥ १३ ॥ पतिव्रता स्त्री

चतंमुनिम् ॥ अहंधर्मव्रतानामधर्मपुत्रीतपोन्विता ॥ ११ ॥ पतिव्रतार्थंविप्रेंद्रचरामिपरमंतपः ॥ कामावाप्ति र्भवेद्यावत्तावदेतत्प्रवर्तनम् ॥ १२ ॥ धर्मव्रतांमरीचिस्तामुवाचप्रीतिपूर्वकम् ॥ पातिव्रतादर्शनान्मेभाविष्य सिशुभव्रते ॥१३॥ पतिव्रतेच्छयापृथ्वींविचरामिह्यहर्निशम् ॥ त्वंचेत्पतिव्रताजाताभजंतंभजमांवरम् ॥१४॥ लोकेनत्वादृशीकन्याममतुल्योनतेवरः ॥ धर्मव्रतेधर्मपुत्रितस्मात्वंभजमेधुना ॥ १५ ॥ धर्मव्रतामुनिंप्रा हधर्मंयाचयसुव्रत ॥ तच्छ्रुत्वाधर्ममगन्मुनिंधर्मोददर्शह ॥१६॥ तेजःपुंजवरंनत्वाआसनार्घ्यादिनार्चयत् ॥

ही के लिये हम दिन रात्रि पृथिवी में घूमा करते हैं यदि तुमारी वरने की इच्छा हो तो मुझको वरो ॥ १४ ॥ संसार मे तुमारे सदृश न तो कन्या है और मेरे सदृश तुम को वर नहीं है हे धर्मव्रते । हे धर्म पुत्रि । इससे तुम हम को अभी भजो ॥ १५ ॥ धर्म व्रता बोली [illegible] हे सुव्रते ! आप मेरे पिता धर्म से याचना करिये यह सुन कर मरीचि धर्म के पास गये मरीचि को आते देखा ॥ १६ ॥

...ने नमस्कार किया आसन अर्ध्य देकर पूजन किया और पूछा कि आप किस लिये आये कहिये ? मरीचि धर्म से बोले ॥ १७ ॥
हम कन्या के लिये पृथ्वी मण्डल मे घूमे तब आप की कन्या देखा आप अपनी कन्या को हमे दीजिये आप का कल्याण होगा ।' १८॥
धर्म भी कन्या को बुलाकर अर्ध्य पाद्य देकर शास्त्रानुसार कन्या मरीचि को दे दियी ।। १९ ।। और पीछे से मरीचि को सन्तुष्ट किया

किमर्थमागतःपृष्टोमरीचिर्धर्ममब्रवीत् ॥ १७ ॥ कन्यार्थंभ्रमतापृथ्वींदृष्टातेकन्यकावरा ॥ मह्यंकन्यांचतांदेहि
श्रेयस्तवभविष्यति ॥ १८ ॥ अर्घ्यादिनासमभ्यर्च्यधर्मःप्रोचेतथेतितम् ॥ धर्मव्रतांसमानीयदत्तवांस्तां
मरीचये ॥१९॥ वरंचदत्तवांस्तस्मात्तद्धास्यंचयथाकृतम् ॥ अग्निहोत्रेणसहितंस्वाश्रमंतांद्विजोनयत् ॥२०॥
रेमेमुनिस्तयासार्द्धंयथाविष्णुःश्रियासह ॥ पार्वत्याचयथाशंभुः सावित्र्याचयथाह्यजः ॥ २१ ॥ जज्ञेपुत्र

मरीचि भी अग्निहोत्र की अग्नि सहित उस कन्या को लेकर निजाश्रम को चले आये ॥ २० ॥ जिस प्रकार लक्ष्मी युक्त विष्णु पार्वती
सहित महादेव सवित्री सहित ब्रह्मारमण करते हैं उसी प्रकार मरीची भी धर्मव्रता के साथ रमण करने लगे ॥ २१ ॥

मरीचि ने धर्मव्रतामें विष्णु के सदृश एक सौ पुत्र उत्पन्न किये एक समय मरीचि जी फल पुष्प लिये वनमें जानकर आये ॥ २२ ॥ और भोजन करके पतिव्रता धर्म व्रता से बोले कि पर चापो ॥ २३ ॥ धर्म व्रता पति के वचन सुनकर घी लगा लगा कर मरीची के पैर चापने लगी ॥ २४ ॥ जब मरीचि निन्द्रा में प्राप्त होगये तो उसी समय ब्रह्माजी वहां पर आये और

शतंतस्यांमरीचिविष्णुगोपमम् ॥ मरीचिःफलपुष्पार्थंवनंगत्वासमागतः ॥ २२ ॥ शांतःकदाचित्तांप त्नीमुवाचेतिपतिव्रताम् ॥ भुक्त्वातुशयनस्थस्यपादसंवाहनंकुरु ॥ २३ ॥ धर्मव्रतातथेत्युक्त्वाशयानस्यच सामुने ॥ पादसंवाहनंचक्रेघृतेनाभ्यज्यतत्परा ॥ २४ ॥ निद्रायमानेथमुनौब्रह्मातंदेशमागतः ॥ इयेष दृष्ट्वाब्रह्माणंमनसार्चयितुंप्रभुम् ॥ २५ ॥ पादसंवाहनंकृत्वाकिंब्रह्माणंप्रपूजये ॥ इत्याकुलासमुत्तस्थौमत्वा साचगुरोर्गुरुम् ॥ २६ ॥ अर्घ्यपाद्यादिकंकृत्वाब्रह्माणंसमपूजयत् ॥ संस्कृतायांतुशय्यायांविश्राममकं

ब्रह्मा को आये हुये देखकर विचार करने लगी कि मैं पति की सेवा करूं या ब्रह्मा को । यह विचार करके ब्रह्मा की सेवा करने के लिये उठी ॥ २५ ॥ २६ ॥ धर्म व्रताने अर्घ्य पाद्यादिक देकर के ब्रह्मा का पूजन किया और शय्या विछाया तब

…आ सुख पूर्वक विश्राम करने लगे ॥ २७ ॥ इतनेही के अन्तर में मरीचि उठे और धर्म वृता को न देखकर अति क्रोध में प्राप्त हो कर शाप देदिया ॥ २८ ॥ मेरे पाव के चापने को तू छोडकर और मेरी आज्ञा को भंग करके तू दूसरी जगह गई इस पाप से मेरे शाप के कारण से जलकर शिला होजा ॥ २९ ॥ स्वामी के शाप देने पर धर्मवृता बोली कि आप के

रोद्जः ॥ २७ ॥ एतस्मिन्नन्तरेभर्तासमुत्तस्थौस्वतल्पतः ॥ धर्मवृतामपश्यन्सविप्रःक्रुद्धःशशापताम् ॥ २८ ॥ पादसंवाहनंत्यक्त्वायस्मादाज्ञांविहायमे ॥ गतान्यत्रततःपापाच्छापदग्धाशिलाभव ॥ २९ ॥ भर्त्राधर्मवृताथसामरीचिप्राहकोपिता ॥ शयानेत्वयिसंप्राप्तोब्रह्मात्वज्जनकोगुरुः ॥ ३० ॥ त्वयोत्थायहिकर्तव्यंस्वगुरोःपूजनंसदा ॥ मयातुधर्मचारण्यतवकार्यंकृतंमुने ॥ ३१ ॥ अदोषाहंयतःशप्तातस्माच्छापंददामिते ॥ त्वंचशापंमहादेवात्मत्तःप्राप्स्यस्यसंशयम् ॥ ३२ ॥ व्याकुलंतंपतिदृष्ट्वाव्याकुलासाप्रजापतिम् ॥

शयन के बाद आपको उत्पन्न करने वाले गुरु ब्रह्माजी आये ॥ ३० ॥ सो सदैव गुरु की सेवा आप को करना चाहिये थी सो आप की धर्म चारिणी मैंने आपका कार्य किया ॥ ३१ ॥ निर्दोष मुझको आपने शाप दिया है इस से मै भी आपको शाप देती हूं कि आप को भी महादेव जी से शाप मिलेगा ॥ ३२ ॥ निज पति को व्याकुल देखकर धर्मवृता शयन करते

हुये ब्रह्मा को नमस्कार करके और लकड़ी से अग्निको जलाकर ॥ ३३ ॥ गार्हपत्य विधि से अग्नि में बैठ कर अतिघोरे तपको करने लगी शापित मरीची भी दारुण तप करने लगे ॥ ३४ ॥ पतिव्रता धर्म व्रता और मरीचिके तप को देखकर इन्द्रादिक देवता नम्र होकर भगवान् को शरण गये ॥ ३५ ॥ क्षीरशायी भगवान् से बोले कि हे हरे ! पतिव्रता के

नत्वाशयानंब्रह्माणमग्निंप्रज्वाल्यचेंधनैः ॥ ३३ ॥ गार्हपत्येस्थिताचक्रेतपःपरमदुष्करम् ॥ तथाशप्तोमरीचिश्चतपस्तेपेसुदारुणम् ॥ ३४ ॥ पतिव्रतायास्यपसामरीचेस्तपसातथा ॥ इंद्रादयश्चसंतप्तागतास्तेशरणंहरिम् ॥ ३५ ॥ ऊचुःक्षीरांबुधौसुप्तंसंतप्तास्तपसाहरे ॥ पतिव्रतायास्तपसात्रैलोक्यंरक्षकेशव ॥ ॥ ३६ ॥ इन्द्रादीनांवचःश्रुत्वाविष्णुर्धर्मव्रतांययौ ॥ एतस्मिन्नेवकालेतुप्रबुद्धोभगवानजः ॥ ३७ ॥ ऊचुर्धर्मव्रतांदेवाअग्निस्थांसहकेशवाः ॥ अग्निमध्येतपःकर्तुंकेनशक्यंपतिव्रते ॥ ३८ ॥ त्वयाकृतंयत्परमंसर्व

तपस्या से हे केशव ? त्रैलोक्य की रक्षा करिये ॥ ३६ ॥ इन्द्रादिकों के वचन सुनकर विष्णु जी धर्म व्रता के पास गये इसी अवसर में ब्रह्माजी शयन से जगे ॥ ३७ ॥ सहित देवता के भगवान् अग्नि में स्थित पतिव्रता धर्म व्रता से बोले कि अग्नि के मध्यमे बैठकर किसी की सामर्थ्य तप करने की नही है ॥ ३८ ॥ तूने अति घोर तपको किया है इससे हे धर्मज्ञे !

पितरो को मुक्ति मिलै ॥५१॥ जरायुज, अंडज, स्वेदज, उद्भिज, योनि मैं उत्पन्न जीव शिलापर देह त्याग करने से विष्णु सदृश रूपको प्राप्त होवैं ॥ ५२ ॥ जिस प्रकार विष्णु के पूजन से यज्ञ पूर्ण होता है उसी प्रकार मेरी शिलपर श्रद्धा तर्पण स्नान भी अक्षय होजावै ॥ ५३ ॥ शिला रूप मेरी देह पर जो यज्ञ को करैं वह शीघ्र ही सिद्ध को प्राप्त

येषांविष्णुलोकंप्रयांतुते ॥ ५० ॥ गदाधरोदृश्यतीर्थंसर्वतीर्थोत्तमोत्तमम् ॥ मुक्तिर्भवतुपितृणांकर्तृणांश्राद्धतः सदा ॥ ५१ ॥ जरायुजांडजावापिस्वेदजावापिचोद्भिजाः ॥ त्यक्त्वादेहंशिलायांतुयांतिविष्णुस्वरूपताम् ॥ ५२ ॥ यथार्चितेहरौसर्वेयज्ञाःपूर्णाभवंतिच ॥ तथाश्राद्धंतर्पणंचस्नानंवाक्षय्यमस्त्विह ॥ ५३ ॥ ममदेहसुरेशानायेयजंतिश्रृतादिकम् ॥ अचिरेणापितेसिद्धाः सिद्धिभाजोभवंतिवै ॥ ५४ ॥ पितृणांकुलानांसहस्र मात्मनासहितंनराः ॥ श्राद्धादिनासमुद्धृत्यविष्णुलोकंव्रजंतिते ॥ ५५ ॥ यावंत्यश्चसरिच्छ्रे

होवैं ॥ ५४ ॥ श्राद्ध करने वाले अपने सहित हजार कुलका उद्धार करके विष्णु लोक को चलेजोवें ॥ ५५ ॥ जब तक गंगा आदिक नदी मनससरोवर आदि तडाग समुद्र ब्रह्मा विष्णु शंकर एक मूर्ति से गयाजावैं तबतक सम्पूर्ण तीर्थ देवता मुनि, गन्धंव

गण, जो कुछ ब्रह्माण्ड में हैं वह सब मेरी शिलारूप शरीरमें स्थित रहे ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ और पत्थर रूपी देह में कोईजो यज्ञादिक हवनादि करे वह सब अक्षय होजावें ॥ ५९ ॥ ६० ॥ धर्म व्रताके यह वचन सुनकर देवता बोले जो

श्चागंगाद्याश्चहृदाः शुभः ॥ समुद्राद्याःसरोमुख्यामानसाद्याःसुरेश्वराः ॥ ५६ ॥ एकोविष्णुस्त्वामूर्तिर्यावत्संकीर्त्यतबुधैः ॥ तावच्छिलायांसर्वाणितीर्थानिसहदैवतैः ॥ ५७ ॥ सदातिष्ठंतुमुनयोगंधर्वाणांगणाश्चये ॥ यावद्भवतिब्रह्मांडंतावत्तिष्ठतुवैशिलां ॥५८ ॥ ममदेहेश्मरूपेचयेयजंतिश्रुतादिकम् ॥ जुह्वत्यग्नौतुतेपांवैअक्षय्यंचोपातिष्ठतु ॥ ५९ ॥ अक्षय्यंतुभवेच्छ्राद्धंजपहोमतपांसिच ॥ शिलापवर्तरूपेण मयितिष्ठंतुभो सुराः ॥ ६० ॥ देवरूपावचःश्रुत्वा देवाःप्रोचुः पतिव्रताम् ॥ त्वायायत्प्रार्थितंसर्वतद्भविष्यत्यसंशयम् ॥ ६१ ॥ गयासुरस्यशिरसिभविष्यसियदास्थिरा ॥ तदापादादिरूपेणास्यास्यामस्त्वयिसुस्थिरा

तूने मांगा वह सब होवैगा इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ ६१ ॥ जिस समय गया सुरके शरीर पर स्थित की जावेगी उस समय से तेरे पर हम लोग भी अनेक रूप धारे करके स्थित होजावे ॥ ६२ ॥ इस प्रकार विष्णु आदि देवता

पितरो

धर्मव्रता को वर देकर निज २ स्थानों को चले गये ॥ ६३ ॥ इति श्री उन्नावप्रदेशान्तर्गतबरौड़ाग्रामनिवासी पं० आनन्दमाधव दीक्षितात्मज पं० महाराजदीन दीक्षित कृत भाषाव्याख्यायां गयामाहात्म्ये तृतीयो ऽध्यायः ॥ ३ ॥

श्री सनत्कुमार जी बोले कि हे नारद ! शिला का महात्म्य मैं अब वर्णन करता हूं मुक्ति के देनेवाला हे मुनिपुङ्गव !

॥ ६२ ॥ वरंशिलायैदत्वावतदाचांतैदेवैःसुराः ॥ ६३ ॥ इतिश्रीवायुपुराणे श्वेतवाराहकल्पगयामहात्म्ये धर्मशिलामहिमावर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ॥

सनत्कुमारउवाच ॥ वक्ष्येशिलायामाहात्म्यं शृणुनारदमुक्तिदम् ॥ यस्यागायंतिदेवाश्चमाहात्म्यंमुनिपुंगव ॥ १ ॥ शिलास्थितापृथिव्यांसादेवरूपातिपावनी ॥ विचित्राख्यांशिलातीर्थत्रिषुलोकेषुविश्रुतम् ॥ २ ॥ तस्याःसंस्पर्शनाल्लोकाःसर्वेहरिपुरंययुः ॥ शून्येलोकत्रयेजातेशून्यायमपुरीह्यभूत् ॥ ३ ॥

जिसका देवता मान करते हैं ॥ १ ॥ पृथ्वी में देवरूपा अति पवित्र वह शिला तीनों लोकों में अति पवित्र होती भई ॥ २ ॥
जिसके स्पर्श वो दर्शन से तीनो लोको के मनुष्य वैकुण्ठ को जाने लगे और तीनो लोक व यमपुरी शून्य होगई ॥ ३ ॥

तब तो यमराज ब्रह्माजी के शरण मे गये ब्रह्माको नमस्कार करके बोले कि हे पितामह ! इस यमदण्डको आप लीजिये ॥ ॥ ४ ॥ ब्रह्माने कहाकि हे धर्मराज ! आप जाकर उसशिला को निज गृह में रख दो । ब्रह्माकी आज्ञा पाकर उस शिला को निज गृह में रख देते भये ॥ ५ ॥ और यमराज पापियों को दण्डदेना प्रारम्भ करदेते भये इसासे वह ब्रह्माण्ड मे

यमोगमद्ब्रह्मलोकंनत्वाब्रह्माणमब्रवीत् ॥ अधिकारंगृहाणाथयमदंडंपितामह ॥ ४ ॥ यममूचेततोब्रह्मा स्वगृहेधारयस्वताम् ॥ ब्रह्मोक्तोधर्मराजस्तुगृहेतांसमधारयत् ॥ ५ ॥ यमोधिकारंस्वंचक्रेपापिनांशासना दिकम् ॥ एवंविधागुरुतराशिलागतिविश्रुता ॥ ६ ॥ यथाविष्णुर्यथाब्रह्मायथादेवोमहेश्वरःब्रह्माड चयथामेरुस्थेयंदेवरूपिणी ॥ ७ ॥ गयासुरस्यशिरसिगरुत्वाद्धारितायतः ॥ अतःपवित्रयोर्योगः पि तणांमोक्षदायकः ॥ ८ ॥ पवित्रयोगर्योयोगहयमेधमजोंकरोत ॥ भागार्थमागतान्दृष्टबाविष्णावाद्यानवबी

शिला अति पवित्र प्रसिद्ध हुई ॥ ॥ ६ ॥ जिस प्रकार विष्णु, ब्रह्मा, महादेव मेरु इसी भांति देव रूपिणी शिला होती भई ॥ ७ ॥ गरु होने के कारण वह शिला गयासुर के शिरपर रक्खी इस प्रकार उन दोनों पवित्र पदार्थों के संयोग से पितरों को मोक्ष प्राप्त होने लगा ॥ ८ ॥ फिर ब्रह्माने अश्वमेध यज्ञ को वहांपर किया सम्पूर्ण देवता निज २ भाग लेने के

लिये आये शिला ने समस्त देवतों के स्थित होने के लिये वर को मांगा देवतों ने वर देकर वहीं पर मूर्ति व अमूर्ति रूप से हुये ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ गयासुर के शिर और पीठ पर शिला के स्थित होने के कारण से मुण्ड पृष्ठ नाम से वह शिला प्रसिद्ध हुई जो पितरों को मुक्ति देने वाली है ॥ १२ ॥ उसी शिला के अन्त भाग को प्रभास पर्वत

चिच्छलां ॥ ९ ॥ शिलास्थिता प्रतिज्ञांतुकुर्वंतुपितृमुक्तये तथेत्युक्त्वाशिलायांतुदेवाविष्णवादयः स्थिताः ॥ १० ॥ शिलारूपेणमूर्ताश्चपदरूपेणदेवता ॥ मूर्तामूर्तस्वरूपेणस्थिताः सर्वेतदाज्ञया ॥ ११ ॥ दैत्यस्यमुंड पृष्ठेतुयस्मात्सासंस्थिताशिला ॥ तस्मात्समुंडपृष्ठाद्रिः पितृणांब्रह्मलोकदः ॥ १२ ॥ आच्छादितः शिलापा दः प्रभासेनाद्रिणाततः ॥ भासितोभास्करेणासौप्रभासः परिकीर्तितः ॥ १३ ॥ प्रभासंहिविनिर्भिद्यशिलां गुष्ठोविनिर्गतः अंगुष्ठस्थितईशोऽपिप्रभासेशः प्रकीर्तितः ॥ १४ ॥ शिलांगुष्ठैकदेशेयः साचप्रेतशिलास्मृ

ने आच्छादन किया और सूर्य भगवान् ने प्रकाशित किया इसीसे उसस्थान का नाम प्रभास पडता भया ॥ १ ॥ उसस्था न को भेदन करके शिला का अँगूठा निकला उसीपर शिवजी स्थित हुये अतः वह प्रभासेशके नाम से प्रसिद्ध हुये ॥ १४ ॥

और अँगूठ को प्रेतशिल कहते हैं जहां के पिण्ड दान करने से पितर प्रेतत्व से छूट जाते हैं ॥ १५ ॥ यहीं पर जनक नन्दिनी सीतायुक्त रामजी के स्नान करने से राम तीर्थ कहलाता है ॥ १६ ॥ जो मनुष्य राम तीर्थ में जाकर प्रथम तीनों लोकों में प्रसिद्ध राम तीर्थ को नमस्कार करै और कहै कि जन्म जन्मान्तरके लिये मेरे पाप नाश हो जावें यह कर स्नान करै

ता ॥ पिंडदानाच्चतस्यांतुप्रेतत्वान्मुच्येतनरः ॥ १५ ॥ रामोदेव्यासहस्नातोरामतीर्थंततःस्मृतम् ॥प्रार्थितोथमहानद्यारामः स्नातोभवेद्यदि ॥ १६ ॥ रामतीर्थंतोभूत्वात्रिषुलोकेषुविश्रुतम् ॥ जान्मान्तरशतंसंप्रयन्मयादुष्कृतंकृतम् ॥ १७ ॥ तत्सर्वंविलयंयातुरामतीर्थाभिषेचनात् ॥ मंत्रणानेनयः स्नात्वाश्राद्धंकुर्वीतमानवः ॥ १८ ॥ रामतीर्थेपिंडदस्तुविष्णुलोकंप्रयात्यसौ ॥ तथेत्युक्त्वास्थितोरामः सीतयाभरताश्रमे ॥ १९ ॥ रामराममहाबाहोदेवानामभयंकर ॥ त्वांनमस्येहं देवेशममनश्यन्तिपातकं ॥ २० ॥

और पिण्डदानादि कर्म करने से विष्णु लोक को यात्री जाता है वहीं पर भरताश्रममें सीता सहित रामजी स्थित हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ हे राम हे राम ? बड़ी २ है बाहु जिनके देवतों को अभयङ्कर हे देवेश ? आप के लिये नमस्कार है हमारे पातकों

को आप नाश कीजिये इस मंत्र से स्नानकरके श्राद्ध पिंडदान करै तो पितर प्रेतत्व से छूटजाते है ॥ २० ॥ २१ ॥ आपहीजल आपही देवेश आपही ज्योतिष्मता ओंके स्वामीमेरे मनशरीर वाणी से किये पापो नाशकरिये ॥ २२ ॥ प्रभासेशके नमस्कार करके भासमानशिव के निकटजावे वहां जाकर शिवको नमस्कार करके यम बलिदेवे ॥ २३ ॥ जिस समय रामजी

मंत्रेणानेनयः स्नात्वाश्राद्धंकृत्वासपिंडकम् ॥ प्रेतत्वात्तस्यपितरोविमुक्ताः पितृतांययुः ॥ २१ ॥
आपस्त्वमसिदेवेशज्योतिषांपतिरेवच ॥ पापंनाशयमेदेवमनोवाक्कायकर्मजम् ॥ २२ ॥ नमस्कृत्य प्रभासेशंभासमानंशिवंव्रजेत् ॥ तंचशंभुंनमस्कृत्यकुर्याद्यमबलिंततः ॥ २३ ॥ रामंवनंगतेशैलमागत्यभरतस्थितः ॥ पितृपिंडादिकंकृत्वारामेशंस्थाप्यतत्रच ॥ २४ ॥ रामंसीतांलक्ष्मणंचमुनीन्स्थापितवान्प्रभुः ॥ भरतस्याश्रमंपुण्यंनित्यंपुण्यद्रुमैर्वृतम् ॥ २५ ॥ मतंगस्यपदंतत्रदृश्यतेसर्वमानवैः ॥ स्थापितंधर्मसर्वस्व

वनको गये थे उसी समय भरथजी स्थानपर आकर पितरों को पिण्डदान करके रामेशजी कीस्थापना किया ॥ २४ ॥ प्रभुने राम सीता लक्ष्मण को स्थापित किया वहां अनेक पवित्र वृक्षो से सुशोभित भरतजीका आश्रम है ॥ २५ ॥

वहीं पर मंतग पद है जहां के श्राद्ध करने से ही पितर तरजाते है ॥ २६ ॥ मंतगपद पर श्राद्ध करने वाला पुरुष समस्त पितरो को तार देता है जो मनुष्य रामतीर्थ में स्नान करके और रामसीताका पूजन करके फिर रामेश्वर जीको प्रणाम करके प्राणी आनन्द को प्राप्तहोता है फिर पर्वत से ढकीहुई शिलाकी जंघा है ॥२७ ॥ २८ ॥ उसी को धर्मराजने कहा

लोकस्यास्यनिर्दशनात् ॥ २६ ॥ मतंगस्यपदेश्राद्धीसर्वांस्तारयतेपितृन् ॥ रामतीर्थेनरः स्नात्वारामंसातां समर्च्यच ॥ २७ ॥ रामेश्वरंप्रणम्यायश्रानंदीजायतेनरः शिलायाजघनंभूयः समाक्रांतंनगेनतु ॥२८॥ धर्मराजेनसंप्रोक्तोनगच्छेतिनगः स्मृतः ॥ यमराजधर्मराजौनिश्चलार्थंव्यवस्थितौ ॥ २९ ॥ ताभ्यांबलिंप्र दास्यामिपितॄणांमुक्तिहेतवे ॥ द्वौश्वानौश्यामशबलौवैवस्वतकुलोद्भवौ ॥ ताभ्यांबलिंप्रदास्याभिस्यातामेत वींहसकौ ॥ ३० ॥ शिलायांदाक्षिणेहस्तेस्थापितः कुण्डपर्वतः ॥ निमिषादित्यईशानभागएत[illegible]श्वराः ॥

नैमिष

थाकि तुम यहां से दूसरे स्थान कोनही जाना इससे संसार में नगनाम से प्रसिद्ध होवेगे उसी शिलाके निश्चलार्थ यम राज धर्मराज स्थित है ॥ २९ ॥ वहींपर वैवस्वत कुलमें उत्पन्न श्यामवर्णकेश्याम शबल दो कुत्तो को हम बलिदेते हैं वह हमारे श्राद्ध मे विघ्न न करैं यह कहकर जो पुरुष श्राद्ध करते हैं उनके पितर मुक्तहोजाते हैं ॥ ३० ॥ शिलाके दहिने हाथ

पर कुण्ड पर्वत हैं जिसपर निमिषादित्य ईशान और महेश्वरजी स्थित हैं ॥ ३१ ॥ भरत के आश्रमके बाहर दोरूप से वरुण चार रूपसे रुद्रजी पितरों को भुक्तिमुक्ति देते हैं इसलिये मनुष्य भरताश्रम को कदापिन त्याग करैं॥ ३२ ॥ भरता श्रमके जानेवाला मनुष्य पाप और उपपातक से पितरों सहित छूटजाता है हेदेवर्षि भरताश्रम में जो कुछ ॥ ३३ ॥

॥ ३१ ॥ बहिर्द्वौवरुणौरुद्राश्चत्वाः पितृमोक्षदा ॥ भरताश्रममासाद्यतेनतान्नत्यजेन्नरः ॥ ३२ ॥ पापे भ्यश्चोपपापेभ्योमुच्यतेपितृभिः सह यत्रकुत्रापिदेवर्षेभरतस्याश्रमेयतः ॥३० ॥ स्नत : श्राद्धादिकं कृत्वातत्कल्पोपिनहीयते ॥ गयायांचाक्षयंश्राद्धंजपहोमतपांसिच ॥ ३४ ॥ सर्वमानंत्यमाहूयदत्तंच भरता श्रमे ॥ चतुर्युगस्वरूपेणचतस्रश्चापिमूर्तयः ॥ ३५ ॥ दृष्टाः स्पृष्टः पूजितास्तुपितृणांमुक्तिदायकाः ॥मुक्ति वामनइत्येवतारकाख्योविधिः पर ३६ त्रिविक्रमंचब्रह्माणंयः पश्येत्पुरुषोत्तमम् पितृभिः सहधर्मात्मास

स्नान करके श्राद्धादिक कर्मकरता है वह सब अक्षय होजात हैं ॥ ३४ ॥ यहां यज्ञ करने से अत्यन्त फल मिलता है और वहयज्ञ चाररूप होकर चारो युगोमें विद्यामान रहते है ॥ ॥ भरताश्रमके दर्शन स्पर्श और पूजन से पितरोंको मुक्तिमिल ती है इसके उपरान्त तारक विधि है ॥ ३६ ॥ गयाक्षेत्र में जो प्राणी धर्मका त्रिविक्रम ब्रह्मा और भगवान का दर्शन

करते है वह पितरें सहित परमगति को प्राप्त होते हैं ॥ ३७ ॥ शिलाके बांय हाथ में अन्तक पर्वत स्थित है जहांपर पिंड करने से पितर ब्रह्मलोक को जाते हैं ॥ ३८ ॥ नैमिषारण्य तीर्थ के निकट ब्रह्माने देवतो सहित यज्ञको किया इसी से मुख्यनाम तीर्थहुआ जहांपर देवतालोग निजपद से स्थित हैं ॥ ३९ ॥ हे मुनि सत्तम ? उन २ पदोंमे व तीर्थोंमें जोकुछ

यातिपरमांगतिम् ॥ ३७ शिलावामहस्तेपिस्थापितोह्यंतकोगिरिः ॥ यः पितुः पिंडदस्तत्रपितृन्ब्रह्मपुरनयेत् ॥ ३८ ॥ नैमिषारण्यपार्श्वेतुईजेब्रह्मासुरैः सह ॥ मुख्यसंज्ञंहितत्तीर्थेदेवास्तत्रपदैः स्थिताः ॥ ३९ ॥ तेषुतेषुपदेष्वेतीर्थेषुमुनिसत्तम ॥ यत्किंचिदशुभंकर्मतत्प्रणश्यतिनारद ॥ ४० ॥ तन्नैमिषवरंपुण्यसेवितंपुण्यपूरुषैः तत्रव्यासः शुकः पैलः कण्वोवेधाः शिवोहरीः ॥ ४१ ॥ तेषांदर्शनमात्रेणमुच्यतेपातकैनरः ॥ वामहस्तेशिलायास्तुतथाउद्यंतकोगिरिः ॥ ४२ सपर्वतःसमानीतोऽगस्त्येनमहात्मना ॥ तत्रब्र-

अशुभ भी कर्म बनपडता है वह हे नारद ? नाश होजाता है ॥ ४० ॥ परम पुरुषों करके यह अति पवित्र नैमिष सेवन करने योग्य है यहां पर व्यास, शुक, पैल, कण्व वेधा, शिवविष्णु का निवास है जिनके दर्शन मात्र से मनुष्यपात को से छूट जाता है शिला के बामहस्तपर उद्यन्तक पर्वत है ॥ ४१ ॥ इस उद्यन्तक पर्वत का अगस्त्यजीने धराहै उसीपर ब्रह्मा और

महादेवजी उग्रतप को करते भये ॥ ४३ ॥ वहीं पर त्रैलोक्य मे दुर्लभ श्रेष्ठ अगस्त्यजी की कुण्ड है जहांपर तपस्या करने से कल्याण प्राप्त होता है ॥ ४४ ॥ और नमस्कार करने से पितर ब्रह्मलोक को जाते है हे देवर्षि ? उन्हीं अगस्त्य करके शिला के वाम हाथपर उदयागिरि पर्वत स्थित किया है जिसमें सदैव गान हुआ करता है इसीसे वादित्रक नामसे

ह्माहरैश्चवतपश्चोग्रंचचक्रतुः ॥ ४३ ॥ तत्रागस्त्तस्यहिवरंकुंडंत्रैलोक्यदुर्लभम् ॥ यत्र मूर्त्यष्टकंसिद्धतप स्तप्त्वाशिवंगतम् ॥ ४४ कुंडेमूर्त्यष्टकंनत्वापितृन्ब्रह्मपुरंनयत् ॥ अगस्तेनाथदेवर्षेउदयाद्रेर्महात्मनः ॥ ४५ ॥ शिलायावामहस्तोपिस्थापितोगिरिगिट्छुभः ॥ वादित्रौर्घैर्दिव्यगीतराद्योवादित्रकोगिरिः ॥ ४६ ॥ तत्रविद्याधरोनाम गंधर्वोप्सरसांगणैः ॥ सेवतेद्यापिगीतानिदिव्यानिसहगायाति ॥ ४७ ॥ मोहनश्चसुनीथश्चशैलूषोमोहनोत्तमः ॥ पर्वतोनारदोध्यानीसंगीतिः पुष्पदंतकः ॥ ४८ ॥ हाहाहूहूप्रभु

वह पर्वत प्रसिद्ध है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ वही पर विद्याधर नाम गन्धर्व अप्सरा गणों से युक्त दिव्य गति गान किया करते है ॥ ४७ ॥ उसी पर्वत पर मोहन, सुनीथ, शैलूष, मोहनोत्तम, नारद संगीति, पुष्पदन्त, और हाहा हूहू आदि गन्धर्व नाच व गान

क्रिया करते हैं और चित्ररथ नाम गन्धर्वों से युक्त ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ अति उत्सव से मधुर २ गीत गाया करते हैं इसीसे वह पर्वत आज भी नित्यही देवता करके सेवित है ॥ ५० ॥ उसी पर्वत पर ब्रह्मा विष्णु महादेव पार्वती के सहित स्थित रहते हैं इस कारण उस स्थान के दर्शन मात्र से ही पितर मुक्त हो जाते हैं और यज्ञ करने से पितरों को परम गति लाभ

तयोगीतनादंप्रचक्रिरे ॥ तत्रचित्ररथोनामसर्वगंधर्वसंवृतः ॥ ४९ ॥ गायन्सुमधुरारायेवगातीन्यद्रामहो त्सवः ॥ अत सपर्वतोदेवैः सेव्यतेऽद्यापिनित्यशः ॥ ५० ॥ धर्मो जस्तत्रदेवेशोहरोभस्मांगरागवन् ॥ पार्वत्यासहितोरुद्रः पर्वतेगीतनादिते ॥ ५१ ॥ मोदतेयाजितोध्यातः पितृणांपरमागतिः ॥ गयायांपरमा त्माहिदृश्यतेद्यापिमुक्तिदः ॥ ५२ ह्रियतेवैष्णवीमायातथारुद्रार्चनेमुने ॥ शिलायादक्षिणेहस्तेभस्म कूटोगिरिधृतः ॥ ५३ ॥ धर्मराजेनतत्रास्तेअगस्त्यः सहभार्यया ॥ अगस्त्यस्यपदेस्नातः पिंडदोब्रह्मलोक

होता है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ हे मुने ! वहा पर रुद्र की पूजा करने से वैष्णवी माया हरण हो जाता है फिर धर्मराजने शिला के दाहिने हाथपर भस्मकूट पर्वत को धरते भये और वहीं पर स्त्री सहित अगस्त्यजी स्थित है जिस स्थान में स्नान पिण्ड-

दान करने में पितरों सहित देवता सहित वह मनुष्य ब्रह्मलोक गामी होता है ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ इस स्थान पर यात्री पृथ्वी में दुर्लभ वर को प्राप्त करते हैं और स्त्री सहित पितरों युक्त ब्रह्मपुर को जाते हैं ॥ ५६ ॥ इसी पर्वत के दक्षिण भाग पर कुंडेश्वर नाथने तपको किया वहीं पर वटवटेश्वर ब्रह्माजी स्थित वहीं पर भगवान् ने उग्र तप को कियाथा

गः ॥ ५४ ॥ पितृभिः सहधर्मात्मापूज्यमानोदिवौकसाम् ॥ भगवांस्तत्रसंयम्यतपश्चोग्रंचचारह ॥ ५५ ॥ महावारस्वनरस्तेभमाहात्म्यंसुविदुलभम् ॥ लोपामुद्रातथाभार्यांपितृन्ब्रह्मपुरंनयेत् ॥ ५६ ॥ कुंडनाथस्तप स्तेपेसिताद्देदक्षिणेगिरौ ॥ वटोवटेश्वरस्तत्रास्थितश्चप्रपितामहः ॥ ५७ ॥ तदग्रेरुक्मिणीकुंडपश्चिमेकापि लानदी ॥ कपिलेश्वोनदीतीरआमसोमसमागमे ॥ ५८ ॥कपिलायांनरः स्नात्वाकपिलेशंसमर्च्यच ॥ कृते श्राद्धेपिंडदानेपितरोमोक्षमाप्नुयुः ॥ ५९ ॥ तत्राग्निधारागिरिवरादागतोद्यतकान्नु ॥ तत्रसारस्वतं

हैं ॥ ५७ ॥ तिसके आगे रुक्मिणी कुण्ड और कपिला नदी है वह पर कपिलेश्वर्जी स्थित हैं जो मनुष्य सोमवारी अमा वस को ॥ ५८ ॥ स्नान करके और कपिलेश का पूजन करके श्राद्ध पिण्डदान करते हैं तो उनके पितर मोक्ष को प्राप्त

होते हैं ॥ ५९ ॥ उद्यन्तक पर्वत से निकली हुई आप की धारा है तिसी के निकट सरस्वतीजी करके कल्पित सारस्वत कुण्ड है ॥ ६० ॥ वहां के स्वामी शुंढा मर्क्का पुत्रयुक्त शुक्राचार्यजी हैं गयाजी में जिसके स्थान पवित्र कहे गये हैं उन सबों में श्राद्ध करने से पितर तर जाते हैं उसी शिलाके वाम हाथपर गृद्धकूट पर्वत है ॥ ६१ ॥ ६२ जिसपर गृद्ध रूप से

कुंडंसरःस्वत्योपकल्पितम् ॥ ६० ॥ शुक्रस्तत्र सुतैः सार्धंशंडमर्कादिभिःप्रभुः ॥ तत्रतत्रमुनींद्राणांपदेषुमुनिसत्तम ॥६१॥ श्राद्धपिंडादिकृत्स्नातःपितॄणांतारयेन्नरः ॥ शिलायावामहस्तेपिगृध्रकूटोगिरिर्धृतः ॥ ६२ ॥ गृध्ररूपेणसंसिद्धस्तपस्तप्त्वामहर्षयः ॥ अतोगिरिर्गृध्रवटस्तत्रगृध्रेश्वरः स्थितः ॥ ६३ ॥ दृष्ट्वागृध्रेश्वरंनत्वायातिशंभोःपदंनरः ॥ तस्यगृध्रवटस्याधःपिंडदः शिवलोकभाक् ॥ ६४ ॥ तत्रगृध्रवटंनत्वाप्राप्तकामोदिवंव्रजेत् ॥ ऋणमोक्षंपापमोक्षंगापमोक्षंशिवंदृष्ट्वाशिवंव्रजेत् ॥ ६५॥ मूलक्षेत्रंचतत्रास्तेपिंडदःस्वर्नयेत्पितॄन् ॥

महात्मा लोगोंने तप किया है वहीं पर गृद्धेश्वरजी स्थित हैं ॥ ६३ ॥ जो मनुष्य गृद्धेश्वरजी के दर्शन करके नमस्कार करता है और पिण्डदान करता है वह अवश्यमेव कैलासवासी होता है ॥ ६४ ॥ गृद्धवट को नमस्कार करने से स्वर्ग की इच्छा करने वाला पुरुष स्वर्ग को चला जाता है और गृद्धेश्वर शिवजी के दर्शन करे तो समस्त दोषों से व पापों से

छूटकर शिवसायुज्यता को प्राप्त होता है ॥ ६५ ॥ उसीस्थान पर मूल क्षेत्र है जहां पर पिण्डदान करने से पितर स्वर्ग को जाते हैं फिर शिला की उदर आदिपाल गिरिसे अच्छादित है ॥ ६६ ॥ वहीं पर हाथी के रूपसे विघ्नों के नाश करने वाले विघ्नेश गणेश जी स्थित हैं जिनके दर्शन मात्र से समस्त विघ्न नाश हो जाते हैं और पितर ब्रह्मपुर जाते हैं ॥ ६७ ॥

आदिपालेनागिरिणासमाक्रांताशिलोदरम् ॥ ६६ ॥ तत्रास्तेगजरूपेणविघ्नेशोविघ्ननाशनः ॥ तंदृष्ट्वामुच्यतेविघ्नैःपितॄन्ब्रह्मपुरंनयेत् ॥ ६७ ॥ गयानाभौसुषुम्नायांपिंडदःस्वर्नयेत्पितॄन् ॥ शिलायावामपादेतुस्थापितःप्रेतपर्वतः ॥ ६८ ॥ धर्मराजेनपापाढ्योगिरिःप्रेतशिलाश्रयः ॥ पादेनदूरेनिक्षिप्तः शिलायाःपापभावतः ॥ ६९ ॥ गतःशिलायाःसंसर्गात्प्रेतकूटः पवित्रताम् ॥ प्रेतकूटेतत्रास्तेदेवास्तत्रपदे स्थिताः ॥ ॥ ७० ॥ तत्रपिंडादिकंकृत्वाप्रेतत्वान्मुच्यतेनरः ॥ पृथक्स्थितास्ताश्चबहवोविघ्नकारिणएवते ॥ ७१ ॥

गयासुर के सुषुम्नामक नाभिपर पिण्डदेने से पितर स्वर्ग को जाते हैं । धर्मराजने शिलाके वामपद पर प्रेत पर्वत को स्थितकिया ॥ ६८ ॥ शिलाने उस अपवित्र प्रेतशिला को दूर फेंकदिया ॥ ६९ ॥ निदान शिलाके स्पर्श से वह प्रेतशिला पवित्र होगई उसी पर देवता स्थितहुए ॥ ७० ॥ वहीं पर पिण्डदान करने से पितर प्रेतत्वसे छूटजाते हैं । गयाजी में

विघ्न करने वाले बहुत स्थित है॥७१॥तीर्थ में श्राद्धकरने वालों के हाथ को मनुष्य रूपधर के विघ्न करा करते हैं ॥७२॥ गयाजी में पादांकिता मुण्डपृष्ठा महादेवी वनिवासिनी देवीका दर्शन करने से मनुष्य पातक व उपपातकों से छूट जाता है ॥ ७३ ॥ फिर गया शिर समस्त पाप व प्रेतभाव से रहित अति पवित्र स्थान है ॥ ७४ ॥ की कटदेश व गयाराजगृह

श्राद्धादिकारिणांनृणांतीर्थेपिष्टविमुक्तये ॥ प्रेताधानुष्करूपेणवरग्रहणकारकम् ॥ ७२ ॥ पादांकितामुंडपृष्ठाममादेवींनिवासिनी ॥ तांदृष्ट्वासर्वलोकाश्चमुक्ताः पापोपपातकैः ॥ ७३ ॥ गयाशिरसिपुण्येचसर्वपापविवर्जिते ॥ प्रेतादिवर्जितेयस्मात्ततोतिपावनंवरम् ॥ ७४ ॥ कीकटेषुगयापुण्यंराजगृहंवनं ॥ च्यवनस्याश्रमंपुण्यंनदीपुण्यापुनःपुनः ॥ ७५ ॥ वैकुंठोलोहदण्डश्चगृध्रकूटोथशौनकः ॥ अत्रश्राद्धादिनासर्वान्पितॄन्ब्रह्मपुरंनयेत् ॥ ७६ ॥ क्रौंचरूपेणहिमुनिर्मुंडपृष्ठेतपोकरोत् ॥ तस्यपादांकितोयस्मातक्रौं

वन च्यवन ऋषि का स्थान पुन पुना नदी अति ही पुण्यस्थान है ॥ ७५ ॥ गयाजी में वैकुण्ठ लोहदण्ड गृद्धकूट शौनक का स्थान पवित्र है यहां के पिण्डदान करने से पितर ब्रह्मलोक को जाते हैं ॥ ७६ ॥ गयाजी में मुंडपृष्ठ स्थानपर क्रौंच

रूप से मुनिने तप किया तो उनके चरण का चिन्ह पृथ्वीपर बन गया अतः क्रौंच पदनामक स्थान अति पवित्र हुआ ॥७७॥ वहां के स्नान मात्रसे प्राणी निजकुल को स्वर्ग पहुंचा देता है वहीं पर काकशिला पर काकबलि देकर पितरों को मुक्त करता है ॥ ७८ ॥ गयाजी में मुण्डपृष्ठ स्थानपर लोमश व लोमहर्षण दोनों ऋषिने परम तपको कर सिद्धिको प्राप्त

चपादस्ततःस्मृतः ॥ ७७ ॥ स्नातोजलाशयेतत्रानयत्स्वर्गंस्वकंकुलम् ॥ बलिः काकशिलायांचकाकमोक्षणमोक्षदः ॥ ७८ ॥ मुंडपृष्ठस्थसन्तौहिलोमशोलोमहर्षणः ॥ द्वावेतौपरमंतप्त्वातपः सिद्धिपरांग ते ॥ ७९ ॥ आहुयताःसरिच्छ्रेष्ठालोमशेनमहानदी ॥ सरस्वतीवेत्रवतीचंद्रभागासरस्वती ॥ ८० ॥ कावेरिसिंधुवीराचचंदनाचसरिद्वरा ॥ वासिष्ठीशरयूर्गंगायमुनागंडकीतथा ॥ ८१ ॥ महानदीवैतरणीनिश्चीराचदिवौकसाम् ॥ शरय्वलकनंदाचउदीचीकनकाह्वया ॥ ८२ ॥ कौशिकीग्रह्लदाज्येष्ठासर्वाघौघविमोचि

हुये ॥ ७९ ॥ वहींपर लोमश ऋषिने नदियों में श्रेष्ठ पापक नाशकरने वाली सरस्वती, वेत्रवती, चन्द्रभागा, कावेरी, सिन्धुवीरा, चन्दना, वासिष्ठी, सरयू, गंगा, यमुना, गंडकी, वैतरणी. निश्चीरा. अलकनंन्दा. उदीची. कनका. कौशिकी, ग्रह्लदा. ज्येष्ठा. कृष्णा. वेणी. चर्मण्यती. आदि पवित्र नदियों को आवाहन किया ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ लोपह-

र्षणभी निज तपोबल के प्रभावसे नर्मदादि नदियों को आह्वान किया ॥ ८४ ॥ उक्तनदियों में जो पुरुष स्नान करके
वरुणा नदिजो है वह अपने पितरों को स्वर्ग पहुँचाता है और ब्रह्म योनि में आवेश करके जो बाहर निकल जाता है७५॥
वह योनि संकट से छूटकर परम ब्रह्म को प्राप्त होता है, जो मनुष्य निःक्षीरा और पुष्करणी नदी में स्नान करके

का ॥ कृष्णावेणीचर्मण्वतीनद्योमुक्तिप्रदायिका ॥ ८३ ॥ आहूयसरिताः श्रेष्ठालोमशोलोमहर्षण ॥ तप
सस्तुप्रभावेणनर्मदांमुनिपुंगवः ॥ ८४ ॥ तासुसर्वासुयःस्नात्वापिंडदःस्वर्गयेत्पितृन् ॥ ब्रह्मयोनिप्रविश्य
यनिर्गच्छेद्यस्तुमानवः ॥ ८५ ॥ परंब्रह्मसयातीहविमुक्तोयोनिसंकटात् ॥ निःक्षीरायांपुष्करिण्यांस्नात
श्राद्धादिकृन्नरः ॥ ८६ ॥ कुर्यात्क्रौंचपदेदिव्येनियमाद्वासरत्रयम् ॥ सर्वान्पितॄन्नयेत्स्वर्गंपंचपापिनएवच
॥ ८७ ॥ जनार्दनोभस्मकूटेतस्यहस्तेतुपिंडदः ॥ आत्मनोप्यथवान्येषांसव्येनापितिलैर्विना ॥ ८८ ॥

श्राद्धादि करते हैं ॥ ८६ ॥ फिर क्रौंच पादपर नियम पूर्वक तीन दिनवास करता है तो वह समस्त पितरों को पंचमहापापी
भी हो तोभी स्वर्गको चलेजाते हैं ॥ ८७ ॥ हे परमर्षि ! भस्मकूट स्थानपर जो जनार्द्दन भगवान के हाथपर सव्य होकर

जो प्राणी तिल के बिना अपना व दूसरे को दधियुक्त पिण्डदान करता है वह विष्णुलोक गामी होता है ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ हे जनार्दन आपके हाथमें जो पिण्डदेता हूं हे प्रभो जो मृत व जीवितभी है उनको यह पिण्डा मिलै ॥ ९० ॥ अन्त समय आपको मुझे यह पिण्डदेना होगा हे जनार्दन ! हे पितृमोक्षद ! आपको नमस्कार है ॥ ९१ ॥ हे पितृ मातृ रूप

जीवतांदधिसंमिश्रंसर्वेतेविष्णुलोकगाः ॥ ८६ ॥ यस्तुपिंडोमयादत्तस्तस्यहस्तेजनार्द्दन ॥ यमुद्दिश्यत्वया देवदेहिपिंडंमृतेप्रभो ॥ ९० ॥ अंतकालेगतेमह्यंत्वंमेदाताभविष्यासि ॥ जनार्द्दननमस्तुभ्यंनमस्तेपितृ मोक्षद ॥ ९१ ॥ पितृस्मार्तनमस्तेस्तुनमस्तेपितृरूपिणे ॥ गयायांपितृरूपेणस्वयमेवजनार्दनः ॥ ६२ ॥ तं ध्यात्वापुंडरीकाक्षंमुच्यतेचऋणत्रयात् ॥ नमस्तेपुंडरीकाक्षऋणत्रयाविमोचन ॥ ६२ ॥ लक्ष्मीकांतनमस्ते स्तुपितृणांमोक्षदोभव ॥ वामजानुंचसंपात्यनत्वाभीमंजनार्दनम् ॥ ९४ ॥ श्राद्धंसपिंडकंकृत्वापितृभि

और पीठ रूप के आप के नमस्कार हैं जनार्दन भगवान गयाजी में आपही पितृरूप धारण करते हैं ॥ ९२ ॥ तिनके पुण्डरी कात्त के ध्यान करने से यात्री तीनों ऋणसे छूटजाता है हे पुण्डरीकाक्ष ! हे ऋणत्रयविमोचन आपको नमस्कार है ॥ ९३ ॥ हे लक्ष्मीकांत ! आप के नमस्कार हैं आप पितरों के मोक्षदाता होवैं फिर वाम पाद को नीचे करके जनार्दन

भगवान को नमस्कार करके ॥ १४ ॥ श्राद्ध करता है वह पितरों सहित विष्णुलोक को जाता है और एक सो कुल को उद्धार कर देता है ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! उसीशिला पर समस्त देवतों के साथ प्रकट व छिपेहुये रूपसे लक्ष्मी के स्वामी नारायण स्थित रहते हैं इसी से वह देवमयीकही जाती है ॥ ९६ ॥ * * इति श्री उन्नाव प्रदेशा-

विष्णुलोकभाक् ॥ पितृभिःसहधर्मात्माकुलानांचशतेनच ॥ ९५ ॥ शिलायांव्यक्तरूपेणव्यक्ताव्यक्तात्मनास्थितः ॥ लक्ष्मीशोविबुधैः सार्द्धंतस्माद्देवमयीशिला ॥ ९६ ॥ इतिश्रीवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पे गयामाहात्म्येशिलावर्णनंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ नारदउवाच ॥ कथंव्यक्तस्वरूपेणस्थितश्चादिगदाधरः ॥ कथमव्यक्तरूपेणव्यक्ताव्यक्तात्मनास्थितः ॥ १ ॥ कथंगदासमुत्पन्नाययाख्यादिग्दाधरः ॥ गदालोलंकथंचासीत्सर्वपापक्षयंकरम् ॥२॥ सनत्कुमारउवाच ॥ गदोनामासुरोह्यासीद्वज्रा द्वज्रतरोदृढः ॥प्रार्थितो

न्तर्गत बरोड़ा ग्राम निवासी पं० आनन्द माधवदीक्षितात्मज पं० महाराजदीन दीक्षित कृत भाषा व्याख्यायां चतुर्थोऽध्यायः

श्री नारदजी बोले कि गया तीर्थ में विष्णु जी किस प्रकार व्यक्त और अव्यक्त रूपसे स्थित हैं ॥ १ ॥ किस प्रकार वह गदा उत्पन्न हुयी जिससे गदाधर नाम से भगवान प्रसिद्ध हुये और किस प्रकार समस्त पापके नाश करने वाला

गदाधर तीर्थ हुआ ॥ ३ ॥ सनत्कुमार जी बोले कि वज्रसे भी मजबूत गदानामा असुर था उसीकी हड्डी को ब्रह्माजी की आज्ञा से विश्वकर्मा ने उन हड्डियों की गदा बना और उस अद्भुत गदाको स्वर्ग में रक्खी ॥ ४ ॥ फिर ब्रह्मा का पुत्र हेति नामराक्षस सौ हजार वर्ष वायूको भक्षण करके घोर तप किया ॥ ५ ॥ यहांतक कि कुछ समय ऊपर को शिर

ब्रह्मणःप्रार्थितस्स्वशरीरास्थिदुस्त्यजम् ॥ ३ ॥ ब्रह्मोक्तिविश्वकर्मापिगदांचक्रेऽद्भुतांतदा ॥ तदास्थिवज्रनिष्पन्नांगदां स्वर्गेह्यधारयत् ॥ हेतिःक्षे ब्रह्मपुत्रस्तपस्तेपेसुदारुणम् ॥ दिव्यवर्षसहस्राणांशतंवायुमभक्षत ॥५॥ उन्मुखश्चोर्ध्व बाहुश्चपादांगुष्ठवरेणह ॥ एकेनतिष्ठतेऽव्यग्रःशीर्णपर्णानिलाश्रयः ॥ ६ ॥ ब्रह्मादींस्तपसातुष्टान्वरंवव्रेवरप्रदान् ॥ देवैर्दैत्यैश्चशस्त्रास्त्रैर्विविधैर्मनुजैरपि ॥७॥ कृष्णेशानस्यचक्राद्यैरवध्यःस्यान्महाबलः ॥ तथेत्युक्त्वान्तर्हितास्तेहे तिर्देवानथाजयत ॥ ८ ॥ इंद्रत्वमकरोद्धेतिर्भीताब्रह्महरादयः ॥ हरिंतेशरणंजग्मुरूचुर्हेतिजहीतितान् ॥ ९ ॥

किया कुछ काल ऊपर को बाह किये हुए कुछ समय एक पैरके अंगूठे से खड़े होकर गिरे हुए पत्तों को खाते हुए तप में निमग्न होगया ॥ ६ ॥ जब ब्रह्मादि देवता प्रसन्न हुए तो वरंब्रूहि कहा, तब असुरने कहा कि मैं देवता दैत्य मनुष्य शस्त्र अस्त्र विष्णु और शंकर के चक्र त्रिशूल से मैं अवध्य होऊं देवतों ने तथास्तु कह कर निज २ स्थानों को चले गये ॥ ७ ॥

॥ ८ ॥ फिर हेति राक्षस ने इन्द्रादि देवतों को जीतकर आपही इन्द्र होगये तो इन्द्रादिक देवता भयभीत होकर भगवान् को शरण गये और कहाकि हेति राक्षस को मारिये ॥ ९ ॥ भगवान बोले कि हे देव ! देवता और दैत्यों से यह हेति राक्षस अवध्य है कोई यहां शस्त्र हमको देतो हम इसको मारें ॥ १० ॥ तो देवता ने उसी परम पवित्र गदाको विष्णु को

ऊचेहरिरवध्योयंहेतिर्देवासुरैःसुरैः ॥ महास्त्रंमेप्रयच्छध्वंहेतिंहन्यांहितेनतम् ॥ १० ॥ इत्युक्तास्ततस्तेदेवो गदांतांहयेददुः ॥ दधारतांगदामाद्योदेवैरुक्तोगदाधरः ॥ ११ ॥ गदयाहेतिमाहत्यदेवेभ्यस्त्रिदिवंददौ ॥ क्षालनार्थंगदायत्रलोलितावीष्णुनाभवत् ॥ १२ ॥ बभूवतद्गदालोलंतीर्थंपरमपावनम् ॥ गदयादावष्ट भ्यगयासुरशिरःशिलाम् ॥ १३ ॥ निश्चलार्थंस्थितोयस्मात्तस्मादादिगदाधरः ॥ शिलायांमुंडपृष्ठास्थिन

देते भये जिस समय उस गदा को धारण भगवान् ने किया तो देवता ने गदाधर नाम से प्रसिद्ध कहा ॥ ११ ॥ भगवान् उस गदा समग्र हेतिराक्षस को मारकर देवताओं को दे दिया फिर वह गदा विष्णु करके वहां पर धोई गई. वहीं गदालोला परम पवित्र तीर्थ हुआ और उसी गदा को धारण करके गयासुर निश्चलकर के लिये शिला पर स्थित हुए इसीसे आदि

गदाधर कहलाये गयाजी में मुण्डष्टष्ठ निवास पर्वत ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ उद्यन्तक, वादित्रक, भस्मकूट, गृध्रकूट, चित्र कूट, आदिपाल, अरविन्दक ॥१५॥ क्रौंचपद, अक्षयवट, फल्गु तीर्थ, मधुस्रवा, घृतकुल्या मधुकुल्या, नदी देविका, वैतरणी, आदि व्यक्त रूपसे आदिगदाधर स्थित है विष्णुपद, रुद्रपद, ब्रह्मपद, ॥ १६ ॥ १७ ॥ कश्यपपद जहां से दो हाथ निकले हुये

निवासो नगपर्वतः ॥ १४ ॥ उद्यंतो गीतवादित्रो भस्मकूटो गिरिर्महान् ॥ गृध्रकूटश्चित्रकूटो आदिपालोऽर विंदकः ॥१५॥ क्रौंचपादोक्षय्यवटः फल्गुतीर्थं मधुश्रवाः ॥ घृतकुल्या मधुकुल्या देविका च महानदी ॥ १६ ॥ वैतरिण्यादिनाव्यक्तरूपेणादिगदाधरः ॥ विष्णोःपदं रुद्रपदं ब्रह्मणः ॥ पदमुत्तमम् ॥ १७ ॥ कश्यपस्य पदं दिव्यं द्वौ हस्तौ यत्र निर्गतौ ॥ पंचाग्निनापदान्यत्र इन्द्रागस्त्यपदे वरे ॥ १८ ॥ रवेश्च कार्तिकेयस्य क्रौंचमातंगयोरपि ॥ दाधीचं चान्द्रगाणेशकाण्वं चंपदमुक्तमम् ॥ १८ ॥ मुख्यलिंगानि सर्वाणि व्यक्ताव्यक्तात्मकान्यपि ॥ आद्यो गदाधरश्चक्रे व्यक्तः श्रीमान्गदाधरः ॥ २० ॥ गायत्री चैव सावित्री त्रिसंध्येयं सरस्वती ॥ गयादित्य

है पञ्चाग्निपद, इन्द्रपद, अगस्त्यपद और रवि केतिकीय, क्रौंच, मातङ्ग दधीचि, चन्द्र, गणेश, कण्वपद व मुख्यलिङ्गपद आदि व्यक्त रूप से गदाधर भगवान् स्थित है ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ गायत्री, सावित्री, त्रिसन्ध्या, सरस्वती, गया,

आदित्य, उत्तरार्क, दक्षिणार्क, नैमिष, श्वेतार्क, गणनाथ, अष्टवसु, एकादशरुद्र, सप्तऋषि, सोमनाथ, सिद्धेश, कपर्दीश विनायक, नारायण, लक्ष्मी, ब्रह्मा पुरुषोत्तम, मार्कण्डेय, कोटीश, अंगिरेश, पितामह, जनार्दन, मंगलागौरी, पुंडरीकाक्ष आदि व्यक्तरूप से आदिगदाधर भगवान् स्थित हैं ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ २४ ॥ जिस समय गदाकर भगवान् गया-

श्चोत्तरार्कोदक्षिणार्कोपिनैमिषः ॥ श्वेतार्कोगणनाथश्चवसवोऽष्टौमुनीश्वराः ॥ २१ ॥ रुद्राश्चैकादशैवाथ तथासप्तर्षयोऽपरे ॥ सोमनाथश्चसिद्धेशः कपर्दीशोविनायकः ॥ २२ ॥ नारायणोमहालक्ष्मीऽब्रह्माश्रि पुरुषोत्तमः ॥ मार्कण्डेयोऽथकोटिशोऽप्यंगिरेशः पितामहः ॥ २३ ॥ जनार्दनोमंगलाचपुण्डरीकाक्षउत्त मः ॥ इत्यादिव्यक्तरूपश्चास्थितश्चादिगदाधरः ॥ २४ ॥ ब्रह्मणासहरुद्राद्यैः कारितेनिश्चलेऽसुरे ॥ तुष्टा वाद्यंगदापाणिंवैधाहर्षेणसंवृतः ॥ २५ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ गदाधरंव्यपगतकालकल्मषंगयागतंगदितगुणंगु

सुर को निश्चल किया तो उस समय ब्रह्माजी अति प्रसन्नमन से भगवान् की स्तुति किया ॥ २५ ॥ ब्रह्माजी बोले कि गदाधारी काल व दोषादि से रहित गुणीलोगों के हृदयकमल में विराजमान कोलाहल पर्वत की स्वच्छ कन्दरा में स्थित

देवादि से पूज्य एतादृश विष्णु को हम नमस्कार करते हैं ॥ २६ ॥ दिन के श्री देवतागणों के सुश्रिय, संसार के श्री-
दैत्यों के नाश करनेंवाले श्री कलियुग के श्री कलिदोष के घातक श्री, और लक्ष्मी करके संसेवित श्री विष्णुजी को नम-
स्कार करता हूं ॥ २७ ॥ देह भी दृढ शरीरवान् ब्रह्मादि देवतो से तुल्य कामदेव करके आदरणीय नेत्रों से अगोचर

णातिगम् ॥ गुहागतंगिविरैगशरेगहंगगर्णीचंतगादिनमहंसततंनमामि ॥ २६ ॥ अहःश्रियंत्रिदशगण
दिसुश्रियंभवाश्रियंदितिभवदारुणश्रियम् ॥ कलिश्रियंकलिमर्दनाश्रियंगदाधरंनौमितमाश्रितश्रियम् ॥
॥ २७ ॥ दृढात्दृढंपरिदृढगाढसंस्तुतंकामादृतंसुदृढमारूढिरूढिगम् ॥ तमाढ्यगंदृढदुरिताढ्यढौकितं
स्वढौकितंदृढतरगोत्रसूक्तिभिः ॥ २८ ॥ विदेहकंकरणकलाविवर्जितंविजन्मकंदिनकरवेदिभूषितम् ॥ ग-
दाधरंध्वनिमुखवर्जितपरंनमाम्यहंसततमनादिमद्विरम् ॥ २९ ॥ मनोतिगंमतिगतितर्जितंपरसद्वयंश्रु

सर्वज्ञ, ऐश्वर्यमान, माया से निर्मुक्त मार्कंडेयादि ऋषि और वेद मन्त्र करके स्तूयमान् श्री विष्णुको नमस्कार करता हूं ।२८॥
पंचभौतिक देह से रहित, कर्मवासनाओं से वर्जित, जन्म मरण से मुक्त, सूर्यमंडल में सुशोभित, वाणीमात्र से प्रत्यक्ष,
सबसे श्रेष्ठ श्रीविष्णुजी को नमस्कार करता हूं ॥ २९ ॥ मनसे अगोचर, बुद्धि की गति से पराङ्मुख, सत्स्वरूप, अद्वितीय,

ज्ञानि जनों करके तथा श्रुति से भी पूर्वगपिपान, चैतन्यरूप, कामादिरोगों से रहित गदाधारी भगवान् को हम नमस्कार करते हैं ॥ ३० ॥ श्रीसनत्कुमारजी बोले कि इस प्रकार समस्त देवताओं के साथ ब्रह्माजी ने जब स्तुति किया तो भगवान् ने वरंब्रूहि कहा ॥ ३१ ॥ तब ब्रह्मा ने कहा कि आपके विना हम इस शिला पर नहीं स्थित हो सक्ते इसलिये

निश्शिरसिस्तुतंबुधैः ॥ चिदात्मकंकलिगतकारणातिगंगाधरंहृदयगतंनमामिदेवम् ॥ ३० ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ देवैःसार्द्धंब्रह्मणैवंस्तुतश्चादिगदाधरः ॥ ऊचे वरान्वृणीष्वैवंवरंब्रह्मातमब्रवीत् ॥ ३१ ॥ शिलायांदेवरूपिण्यांनतिष्ठामस्त्वयाविना ॥ संस्थास्यामस्त्वयासार्द्धंनित्यंव्यक्तादिरूपिणा ॥ ३२ ॥ एवमस्तुश्रियासार्द्धंस्थितश्चादिगदाधरः ॥ लोकानांरक्षणार्थायजगतांमुक्तिहेतवे ॥ ३३ ॥ सुव्यक्तः पुंडरीकाक्षोजनार्दनइतिश्रुतः ॥ देवैरगम्यायामूर्तिरादिभूतासनातनी ॥ ३४ ॥ सुव्यक्तःश्वेतकल्पेतुभाविष्या

आप प्रकटरूप से यहीं पर स्थित होइये ॥ ३२ ॥ तब भगवान् ने तथास्तु कहा और उस पवित्र शिला पर आदि गदाधर नाम से संसार के हित के लिये स्थित हुये ॥ ३३ ॥ भगवान् ने कहा कि श्वेत कल्प में आदि गदाधर

पुंडरीकाक्ष जनार्दन नाम से देवताओं करके भी अगम्य सनातनरूप को धारण करके प्रकट होंगे और वाराहकल्प में अव्यक्त देवताओं करके अगम्य संसारके तारण हेतु और देवता को रक्षाके लिये गयाशिर सुव्यक्त प्रकट होंगे॥३४॥३५॥३६॥ जो पुरुष भक्तिपूर्वक सदा देव गदाधर भगवान् का दर्शन करेंगे वह कुष्ठादि व्याधियों से छूटकर वैकुण्ठ लोक को जांय-

मितथापुनः ॥ वाराहकल्पेह्यव्यक्तोदेवोभव्ययगमत्पुरा ॥ ३५ ॥ संतारणायलोकानांदेवानांरक्षणायच ॥ गयाशिरसिसुव्यक्तोभविष्यतिनसंशयः ॥ ३६ ॥ येद्रक्ष्यंतिसदाभक्त्यादेवमादिगदाधरम् ॥ कुष्ठादिव्याधिनिर्मुक्तायास्यन्तिहरिमंजसा ॥ ३७ ॥ येद्रक्ष्यंतिसंदाभक्त्यादेवमादिगदाधरम् ॥ तेप्राप्यस्यंतिधनंधान्यमायुरारोग्यमेवच ॥ ३८ ॥ कलत्रपुत्रपौत्रादि गुणकीर्तिसुखानिच ॥ ॥ श्रद्धयायेनमस्यंतिराज्यंब्रह्मपुरंतथा ॥३९॥ भुक्त्वाव्रजेयुः संततंपुण्यपुण्यफलंनरः ॥ गंधदानेनगंधाढ्यंसौभाग्यंपुष्पदानतः ४०॥

गे ॥ ३७ ॥ जो पुरुष सदैव मेरा दर्शन करेंगे तिन को धन धान्य आयु आरोग्यता प्राप्त होगी ॥ ३८ ॥ जो पुरुष मुझे भक्ति पूर्वक नमस्कार करते हैं वह पुत्र, पौत्र, कलत्र, गुण, कीर्ति, सुख से संयुक्त होकर राज्य सुख को भोग करके अन्त समय ब्रह्म लोक को जाते हैं ॥ ३९ ॥ आदि गदाधर भगवान् के हेतु गन्धादिक के दान करने से सुपुण्य प्राप्त हो

कर उसे गन्ध युक्त पदार्थ प्राप्त होते हैं और पुष्प दान से सौभाग्य मिलता है ॥ ४० धूपदान से राज्य की प्राप्ति और दीप दान से तेज बढता है, पताका दान करने से पाप की हानी होती है यात्रा करने से ब्रह्मपुर यात्रा का भागी होता है ॥ ४१ ॥ श्रद्धा पूर्वक पिण्डदान करने से पितरों का स्वर्ग वास प्राप्त होता है श्राध दान मंत्र करके जो पुरुष देव गदाधर

धूपदानेनराज्याप्तिर्दीपाद्दीप्तिर्भविष्यति ॥ ध्वजादानात्पापहानिर्यात्राकृद्ब्रह्मलोकभाक् ॥ ४१ ॥ श्राद्धादिपिंडदानेनविष्णुंनयतिवैपितॄन् ॥ श्राद्धदानेनयेदेवंमंत्रेणादिगदाधरम् ॥ ४२ ॥ स्तोष्यंतियेसमभ्यर्च्यपितॄन्नेष्यंतिमाधवम् ॥ शिवोपपरयाप्रीत्या तुष्टावादिगदाधरम् ॥ ४३ ॥ । शिवउवाच ॥ अव्यक्तरूपोयोदेवोमुंडपृष्ठा द्रिरूपतः ॥ फल्गुतीर्थादिरूपेणनमाम्यादि गदाधरम् ॥ ४४ ॥ व्यक्तरूपोहियोदे

भगवान का ॥ ४२ ॥ पूजन कर स्तुति करते हैं वह पितरों को विष्णु लोक को प्राप्त कराते हैं। शिवजी ने आ परम प्रीति करके आदि गदाधर भगवान का अस्तुति किया ॥ ४३ ॥ शिव जी बोले कि मुण्ड पृष्ठ आदि रूप से और फल्गू आदि रूपसे अव्यक्त रूप होय. जो देवयहां पर स्थित हैं उनको हमारा नमस्कार है ॥ ४४ ॥ एक रूप जो जनार्दन स्वरूप से

मुण्ड पृष्ठ में जो देव आदि गदाधरजी स्थित हैं उनको नमस्कार हैं ॥ ४५ ॥ देवरूपिणी शिला में ब्रह्मादि देवताओं क
रके पूजित स्तुत्य आदि गदाधरजी को नमस्कार हैं ॥ ४६ ॥ महदादि कारण व जगत के एकही जो व्यक्त कारण हैं
परन्तु ज्ञानसे अव्यक्त हैं तिन को हम नमस्कार करते हैं ॥ ४७ ॥ जिनके दर्शन, स्पर्श, पूजन, प्रणाम श्राद्ध पिण्डदान

वोजनार्हनस्वरूपतः ॥ मुंडपृष्ठेस्वयंह्यास्तेनमा० ॥ ४५ ॥ शिलायांदेवरूपिण्यांस्थितोब्रह्मादिभिःसुरैः ॥
पूजितंसंस्तुतंदेवंनमा० ॥४६॥ महादेवश्चजगतोव्यक्तस्यैकंहिकारणम् ॥ अव्यक्तज्ञानरूपंतंनमा० ॥४७॥
यंचदृष्ट्वातथास्पृष्ट्वापूजयित्वाप्रणम्यतम् ॥ श्राद्धैर्ब्रह्मलोकासिनमा० ४८ देहेंद्रियमनोबुद्धिप्राणाहंका
रवर्जितम् ॥ जाग्रत्स्वप्नविनिर्मुक्तंनमा० ॥ ४९ ॥ व्यक्ताव्यक्तस्वरूपेणपदरूपेणसंस्थितम् ॥ मुखादि
लिंगरूपेणनमाम्यादिगदाधरम् ॥ ५० ॥ नित्यानित्यवर्निर्मुक्तंपरमागदमव्ययम् ॥ तुरीयंज्योतिरात्मा-

आदि करने से ब्रह्म लोक प्राप्त होता है उन्हीं आदि गदाधर भगवान को हम नमस्कार करते हैं ॥ ४८ ॥ देह इन्द्रिय,
मन बुद्धि, प्राण, अहंकार से वर्जित, जाग्रत सुप्ति सुसुप्ति अवस्था से रहित आदि गदाधर भगवान को हम नमस्कार
करते हैं ॥ ४९ ॥ प्रकट अप्रकट रूप से पद और मुख आदि देह के चिन्हों से गयाजी में स्थित हैं तिन को हम नमस्कार

करते हैं ॥ ५० ॥ नित्य अनित्य से रहित परमानन्द, अव्यय तुरीय अवस्था सम्पन्न, एतादृश आदि गदाधर भगवान को नमस्कार हैं ॥ ५१ ॥ सनत्कुमारजी बोले कि अब हे शौनक ? जब महादेवजी करके इस प्रकार गदाधर भगवानस्तुति किये गये तो ब्रह्मादि देवताओं के साथ भगवान उस पवित्र शिलापर स्थित हुये ॥ ५२ ॥ जो कोई पुरुष मुण्ड पृष्ठपर

नंनमाम्यादिगदाधरम् ॥ ५१ ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ एवंस्तुतोमहेशेनप्रीत्याह्यादिगदाधरः ॥ स्थिता देवशिलायांच देवब्रह्मादिभिःसुरः ॥ ५२ ॥ संस्थितंमुंडपुष्टाद्रौदेवमादिगदाधरम् ॥ स्तुवंति पूजयंतीहविष्णुलोकंव्रजंतिते ॥ ५३ ॥ धर्मार्थीप्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थार्थमाप्नुयात् ॥ कमानर्थीवाप्नु-यात्कामीमोक्षार्थीमोक्षमाप्नुयात ॥ ५४ ॥ वंध्याचलभतेपुत्रमभ्यर्च्चादिगदाधरम् ॥ राजाविजयमाप्नोतिशुद्रःसुखमवाप्नुयात ॥ ५५ ॥ पुत्रार्थीलभतेपुत्रान्वेदवेदांगपारगान् ॥ मनसाप्रार्थितंसर्वंपूजाद्यैःप्रा

स्थित आदि गदाधर भगवान की अस्तुति पूजा करते हैं वह विष्णु लोक को जाते हैं ॥ ५३ धर्मार्थी, अर्थार्थी कर्मार्थी, मोक्षार्थी, अपने मनोरथों को प्राप्त होते हैं ॥ ५५ ॥ वन्ध्या पुत्र को राजा विजय को शूद्र सुख को भगवान गदाधर के पूजन से प्राप्त होते हैं ॥ ५५ ॥पूजन सेपुत्रार्थी वेद वेदाङ्ग के पढने वाले पुत्र को प्राप्त होते हैं आदि गदाधर भगवान

के वर्न मात्र से इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ ५६ ॥ इति श्री उन्नाव प्रदेशान्तर्गत बरोड़ा ग्राम निवासी पं० आनन्दमाधव दीक्षितात्मज पं० महाराज दीन दिक्षित कृत भाषा व्याख्यायां पंचमोऽध्याय ॥ ५ ॥

श्रीसनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ? मुक्ति के देनेवाली श्री गयातीर्थ की यात्रा को वर्णन करते हैं जिसकोप्राप्नुयाद्धरे ॥ ५६ ॥ इति श्रीवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पेगयामहात्म्येपंचमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

॥ सनत्कुमारउवाच ॥ गयायात्रांप्रवेक्ष्यामिशृणुनारदमुक्तिदाम् ॥ निष्कृतिस्त्विहकर्तृणांगीयतेपुरा ॥ १ ॥ उद्यतश्चेद्गयांगतुंश्राद्धंकृत्वाविधानतः ॥ विधायकार्पटीवेषंकृत्वाग्रामंप्रदक्षिणम् ॥ २ ॥ ततोग्रामांतरंगत्वाश्राद्धशेषान्नभोजनम् ॥ ततःप्रतिदिनंगच्छेत्प्रतिग्रहविवर्जितः ॥ ३ ॥ प्रतिहग्राद्दुपावृत्तः संतुष्टो नियतः शुचिः ॥ अहंकारनिवृत्तोयः सतीर्थफलमश्नुते॥४॥ यस्यहस्तौचपादौचमनश्चापिसुसंयतम्॥ जि-

ने पूर्वही प्रश्न कहा है जिसके करने से मनुष्य को निष्कृति प्राप्त होती है ॥ १ ॥ प्रथम यात्रा के समय श्राद्ध को करिके कार्पटी भेष से निज ग्राम को प्रदक्षिणा कर ॥ २ ॥ फिर ग्राम के बाहर जाकर भोजन करके किसी प्रकार की प्रतिग्रह न लेता हुआ यात्रा करै ॥ ३ ॥ प्रतिग्रह से रहित, सन्तुष्ट, पवित्र अहंकार से रहित जो पुरुष यात्रा करता है वह तीर्थ

के फल को मागतो है ॥ ४ ॥ जो पुरुष हाथ पर मनआदि से अचञ्चल होवे जितेन्द्रिय दान शील हो गयातीर्थ के यात्रा का फल प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ घर से गया निमित्त यात्रा करने मात्र सेही पितरों का पद २ पर स्वर्ग की सीढी होती जाती है ॥ ६ ॥ गयाजी के यात्रा करने वाले पुरुष को पद पद पर अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है इसमें कुछ

तेंद्रियोदानशीलःसतीर्थफलमश्नुते ॥ ५ ॥ गृहाच्चालितमात्रेणगयायांमगनंप्रति ॥ स्वर्गारोहणसोपानं पितॄणांचपदेपदे ॥ ६ ॥ पदेपदेश्वमेधस्ययत्फलंगच्छतोगयाम ॥ तत्फलंलभतेपुण्यंसमग्रनात्रसंशयः ७ ॥ ततोगयांसमासाद्यब्रह्मचारीसमाहितः ॥ अश्वमेधमवाप्नोतिगमनादेवनारद ॥ ८ ॥ ततोगयाप्रवेशेतु पूर्वतोस्तिमहानदी ॥ तत्रतोयंसमुत्पाद्यस्नातव्यंनिर्मलजले ॥ ९ ॥ देवादींस्तर्पयित्वातुश्राद्धंकृत्वायथाविधि ॥ स्ववेदशाखागदितमर्घ्यावाहनवर्जितम्॥१०॥ अपराह्णेशुचिर्भूत्वागच्छेच्चप्रेतपर्वतम् ॥ ब्रह्मकुंडेततःस्न

भी संशय नहीं है ॥ ७ ॥ इसलिये ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करके गयाजी की जो हे नारद ! यात्रा करता है सोई अश्व मेध यज्ञ के फल को पाता है ॥ ८ ॥ प्रथम गयाजी में पूर्वतरफ जो महानदी है उसके पवित्र जलमें स्नान कर ॥ ९ ॥ वहीं पर देवतादिकों को तप करने यथाशक्ति निज वेद शाखा को उच्चारण करके अर्घ्य आवाहन से वर्जित श्राद्ध का

विधि

करै ॥ १० ॥ दुसरे दिन पवित्र होकर प्रेत पर्वत में जाय और ब्रह्मकुंड में स्नान करके देवतादिकों को तर्पण करै ॥ ११॥ प्रेतपर्वत पर सपिन्डो का श्राद्ध करै और प्राचीनावीती होकर दक्षिण मुख से सपिण्डों का श्राद्ध करें ॥ १२ ॥ हे कव्यवाह नल सोम यम अर्यमा अग्निष्वात्ता बर्हिषद और सोमप पितर देव आपलोग यहां पर आइये आपही लोगों

त्वादेवादींस्तर्पयेत्सुधाः ॥ ११ ॥ कुर्याच्छ्राद्धसपिंडानांप्रयतः प्रेतपर्वत ॥ प्राचीनावीतिनाभाव्यंदक्षिणाभिमुखः स्मरन् ॥ १२ ॥ कव्यवाहोनलःसोमोयमश्चैवार्यमातथा ॥ अग्निष्वात्ताबर्हिषदःसोमपाःपितृदेवताः ॥१३॥ आगच्छंतुमहाभागायुष्माभीरक्षितास्त्विह ॥ मदीयाःपितरोयेचकुलेजाताःसनाथयः ॥१४ ॥ तेषांपिंडप्रदानार्थमागतोस्मिगयामिमाम ॥ तेसर्वेतृप्तिमायांतुश्राद्धेनानेनशाश्वतीम ॥ १५ ॥ आचम्योकत्तातुपंचांगंप्राणायामंतुयत्नतः ॥ पुनरावृत्तिरहितब्रह्मलोकाप्तिहेतवे ॥ १६ ॥ एवंचविधिवच्छ्राद्धंकृत्वा

करके यह स्थान रक्षित हैं हमारे कुलमें एक नर्गभ से उत्पन्न पितरलोग सपिण्ड है उनके भी आप रक्षक हैं ॥ १३ ॥ १४ ॥ उन्ही लोगो के पिण्डदानार्थ हम गयाजी में आय है वह हमारे इस श्राद्ध से तृप्त होवे ॥ १५ ॥ फिर आचमन करके ब्रह्मलोक की प्राप्त की इच्छा से यत्नपुर्वक पंचाङ्ग पितरों को प्रणाम कर। १६ ॥ इस प्रकार विधिवत कर्मानुसार

पितरों को आवाहन करके श्राद्ध को करै ॥१७॥ चरुसे तैसे या पंचगव्यसे प्रेतशिला धोकर तिलों से श्राद्ध करै ॥ १८ ॥
मन्त्रानुसार देवपदों को पूज्य करके जितने तिल मनुष्य श्राद्ध में ग्रहण करता है उतनेही असुर डर करके भाग जाते हैं
जिस प्रकार सिंह के भय से मृगा भागते हैं । अष्टक में वृद्धि में गयाक्षेत्र में क्षयाह में ॥१९॥२०॥ माता का श्राद्ध अलग२

पूर्वंयथाक्रमम् ॥ पितॄनावाह्यतत्राभ्यर्च्यमंत्रैःपिंडप्रदोभवेत् ॥ १७ ॥ तीर्थेप्रेतशिलाद्रौचचरुणासघृतेनच ॥
प्रक्षाल्यपर्वतस्थानंपंचगव्यैःपृथक्पृथक् ॥ १८ ॥ स्वमंत्रैरथसंपूज्यपदेचपददैवतम् ॥ यावत्तिलमनुष्यैश्च
गृहीताःपितृकर्मसु ॥ १९ ॥ गच्छंतिभीतास्त्वसुराःसिंहंदृष्ट्वायथामृगाः ॥ अष्टकासुचवृद्धौचगयायांच
मृतेऽहनि॥२०॥ मातुश्राद्धंपृथक्कुर्यादन्यादन्यत्रपतिनासह ॥ वृद्धिश्राद्धंतुमात्रादिगयायांपितृपूर्वकम्॥२१॥
पादपूर्वंसमारभ्यदक्षिणाग्रैःकुशैःक्रमात् ॥ पित्रादीनांसमास्तीर्यतेषांगृह्योक्तमाचरेत् ॥ २२ ॥ सक्तुनासु

करै अन्यत्र सपत्नीक श्राद्ध करके उद्धार करै केवल गयाश्राद्ध में पिता का अलग माता का अलग श्राद्ध करना चाहिये
॥ २१ ॥ प्रथम पितरों के निमित्त पाद पूर्वक दक्षिणा तरफ कुशोंको क्रमसे करके पृथ्वीपर बिछा कर शास्त्रोक्त विधि से

श्राद्ध करै ॥ २२ ॥ तिल घी शहत दधि आदि पवित्र द्रव्यों से युक्त एक मुट्ठी सत्तू से अक्षय पिण्डदान करे ॥ २३ ॥
तिल जव से सम्बन्धि पितरों को आवाहन करैं ॥ २४ ॥ ब्रह्मा से लेकर सम्पूर्ण देवता ऋषि मनुष्य और समस्त पितर व
सातों द्वीप में रहने वाले कोटि कुल के पितरों के निमित्त तिल व जल हम देते हैं इसी से वे तृप्त होवैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

ष्टिमात्रेणदद्यादक्षय्यपिंडकम् ॥ तिलाज्यमधुदध्यादीन्पडद्रव्येषुयोजयेत् ॥ २३ ॥ संबंधिनास्तिलाद्भिश्च
कुशेष्वामाहयेत्ततः ॥ २४ ॥ आब्रह्मस्तंबपर्यंतंदेवार्षीपितृमानवाः ॥ तृप्यंतुपितरःसर्वेमातृमातामहादयः
॥अतीतकुलकोटीनांसप्तद्वीपनिवासिनाम् ॥ २५ ॥ आब्रह्मभुवनाल्लोकादिदमस्तुतिलोकदकम् ॥ २६ ॥
पिताःपितामहश्चैवतथैवप्रपितामहः ॥ मातापितामहीचैवतथैवप्रपितामही ॥ मातामहस्तत्पिताचप्रमाता
महदादयः ॥२७। तेषांपिंडोमयादत्तोह्यक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ मुष्टिमात्रप्रमाणंचआर्द्रामलकमात्रकम् ॥ २८ ॥

पिता पितामह प्रपितामह माता पितामही प्रपितामही मातामह आदिकों के तृप्ति के हेतु यह पिण्ड हम देते हैं यह अक्षय
होवै मुट्ठीभर ओदे अमला तथा ॥ २७ ॥ २८ ॥ छीकुर के पत्तों के समान गयाशिर में पिण्ड देने से सात गोत्र और

एक सौ एक कुल तर जाते हैं ॥ २९ ॥ पिता माता स्त्री बहिन कन्या फूफू मौसी यह सात निज के गोत्र हैं ॥ ३० ॥ चौबीस पिता के, बीस माता के, सोलह स्त्री के, बारह बहिन के, ग्यारह कन्या के, दस फूफू के, आठ मौसी के कुल यह एक सौ एक कुल कहाते हैं ॥ ३१ ॥ हमारे कुल में मर करके जिनकी गति नहीं हुई है और जिनको हम नहीं

शमीपत्रप्रमाणेनपिंडंदद्याद्गयाशिरे ॥ उद्धरेत्सप्तगोत्राणांकुलमेकोत्तरंशतम् ॥ २९ ॥ पितुर्मातुश्चभार्यायाभगिन्यादुहितुस्तथा ॥ पितृष्वसुर्मातृभगिन्याःसप्तगोत्राःप्रकीर्तिताः ॥ ३० ॥ चतुर्विंशश्चविंशश्चाषोडशद्वादशैवहिं ॥ रुद्रादशवसुश्चैवकुलान्येकोत्तरंशतम् ॥ ३१ ॥ अस्मत्कुलेमृतायेचगतिर्येषांनविद्यते ॥ आवाहयिष्येतान्सर्वान्कुशपृष्ठेतिलोदकैः ॥ ३२ ॥ मातामहकुलेमृतायेचगतिर्येषांनविद्यते ॥ आवाहयिष्येतान्सर्वान्कुशपृष्ठेतिलोदकैः ॥ ३३ ॥ बंधुवर्गकुलेयेचगतिर्येषांनविद्यते ॥ आवाहयिष्येतान्सर्वान्गतिर्ये

जानते हैं उनको तिल जल करके आवाहन करते हैं ॥ ३२ ॥ मातामह कुल में जिनको मृत्यु हुई है जिनको हम नहीं जानते उनकी ताले जल करके आवाहन करते हैं ॥ ३३ ॥ बन्धुवर्ग कुल में जिनकी गति हम नहीं जानते है उनको भी

आवाहन करते ह ॥ ३४ ॥ इस प्रकार उद्धारण करके जल सहित मन्त्र युक्त कुशा पर आवाहन करके कर्मानुसार पिण्ड-दान करे ॥ ३५ ॥ हमारे कुल में जो मृत हुये हैं जिनकी गति हम नहीं जानते हैं उनके उद्धार के हेतु यह पिण्ड हम देते हैं ॥ ३६ ॥ मातामह कुल में जो मृत हैं उनके तारण हेतु यह पिण्डदान मैं करता हूं ॥ ३७ ॥ बन्धुवर्ग कुल में जो

षांनविद्यते ॥ ३४ ॥ इत्येतैःसजलैर्मंत्रैर्दर्भेषुध्यानवान्पितॄन् ॥ आवाह्याभ्यर्च्यतेभ्यश्चपिण्डान्दद्याद्यथाक्रमम् ॥ ३५ ॥ अस्मत्कुलेमृतायेचगतिर्येषांनविद्यते ॥ तेषामुद्धरणार्थायइमंपिंडंददाम्यहम् ॥ ३६ ॥ मातामहकुलेयेचगतिर्येषांनविद्यते ॥ तेषामुद्धरणार्थायइमंपिंडंददाम्यहम् ॥ ३७ ॥ बंधुवर्गकुलेयेचगतिर्येषांनविद्यते ॥ तेषामुद्धरणार्थाय० ॥ ३८ ॥ अजातदंतायेकेचिद्येचगर्भेप्रपीडिताः ॥ तेषामुद्धरणा० ॥ ३९ ॥ अग्निदग्धाश्चयेकेचिन्नाग्निदग्धास्तथापरे ॥ विद्युच्चौरहतायेचतेभ्यःपिंडंददाम्यहम् ॥ ४० ॥

मृत हैं उनके मुक्त्यर्थ यह पिण्ड हम देते हैं ॥ ३८ ॥ जिनके दन्त नहीं उत्पन्न हुये और जो गर्भही में पीडित हुये हैं उनके उद्धारके निमित्त यह पिण्डदान हम करते हैं ॥ ३९ ॥ अग्नि से जले जो पिता अग्नि से दग्धहुये हैं जो बिजुली चोरोंसे

मारे गये हैं तिनके निमित्त यह पिण्डदान हम करते हैं ॥४०॥ वनाग्नि से जले सिंह व्याघ्र से मारे गये। दंष्ट्रियों से और शृं गियों से हत पितरों के हेतु यह पिण्डदान हम करते हैं ॥४१॥ जो कोई बन्धन में मरे हैं विष शस्त्र से जो हत हैं जिन्होंने नि ज से आत्मघात किया है उनके तारण हेतु यह पिण्ड हम देते हैं ॥४२॥ वन में रास्ते में क्षुधा पिपासा से हत यो मरे पितर

दावदाहेमृतायेचसिंहव्याघ्रहताश्चये ॥ दंष्ट्रिभिःशृंगिभिर्वापितेभ्यःपिंडंददाम्यहम् ॥ ४१ ॥ उद्बंधनमृता येचविषशस्त्रहताश्चये ॥ आत्मनोघातिनोयेचतेभ्यःपिंडंददाम्यहम् ॥४२॥ अरण्येवर्त्मनिरणेक्षुधयातृष याहताः ॥ भूतप्रेतपिशाचाश्चतेभ्यःपिंडंददाम्यहम् ॥ ४३ ॥ रौरवेचांधतामिस्रेकाल सूत्रेचयेगताः ॥ तेषामुद्धरणार्थायइमंपिंडंददाम्यहम् ॥ ४४ ॥ असिपत्रवनेघोरेकुंभीपाकेचयेगताः ॥ तेषामुद्धरणा० ॥ ४५ ॥ अनेकयातनासंस्थाः प्रेतलोकंचयेगताः ॥ तेषामुद्धरणार्था० ॥ ४६ ॥ असंख्ययातनासंस्था-

हैं और भूत प्रेत पिशाच आदि के लिये यह पिण्ड हम देते हैं ॥४३॥ रौरव नर्क अन्ध तामिस्र नर्क कालसूत्र में प्राप्त जो पितर हैं तिनके उद्धार के हेतु हम पिण्ड देते हैं ॥४४॥ असिपत्र नर्क कुम्भीपाक नर्क में जो स्थित पितर हैं उनके उद्धार के लिये हम पिण्ड देते हैं ॥४५॥ अनेक दुःखों से दुःखित प्रेतलोक में प्राप्त जो पि .र हैं उनके तारण हेतु यह पिंड हम

देतेहैं ॥ ४६ ॥ जो यमयातनाओं करके अनेक दुःख सागर में स्थित पितर हैं तिनके मुक्ति के लिये यह पिंड हम देते हैं ॥ ४७ ॥ समस्त नरकों में स्थित जो पितर हैं उनके तारण हेतु यह पिंड हम देतेहैं ॥ ४८ ॥ पशु पक्षी कीट पतङ्ग योनि में प्राप्त पितरों के तारण हेतु यह पिण्ड हम देते हैं ॥ ४९ ॥ जो पितर निज कर्म बस अनेक जातियों में

येनीतायमशासनैः ॥ तेषामुद्धरणार्था॰ ॥ ४७ ॥ नरकेषुसमस्तेषुयातनयांचसंस्थिताः ॥ तेषामुद्धरणा॰ ॥ ४८ ॥ पशुयोनिगतायेचपक्षिकीटसरीसृपाः ॥ अथवावृक्षयोनिस्थास्तेभ्यः पिंडं ददाम्यहम् ॥ ४९ ॥ जात्यंतरसहस्रेषुभ्रमंतःस्वेनकर्मणा ॥ मानुष्यंदुर्लभंयेषांतेभ्यः पिंडंददाम्यहम् ५० ॥ दिव्यंतरिक्षभूमिष्ठाःपितरोबांधवादयः ॥ मृताअसंस्कृतायेचतेभ्यःपिंडंददाम्यहम् ॥ ५१ ॥ येकेचित्प्रेतरूपेणवर्ततेपितरोमम ॥ तेसर्वेतृप्तिमयांतुपिंडेनानेनशाश्वतीम् ॥ ५२ ॥ येऽबांधवाबांधवावायेन्यजन्म

भ्रमण कर रहे हैं उनके मुक्ति के लिये यह पिण्ड हम देते हैं ॥५०॥ पृथ्वी आकाश अन्तरिक्ष में स्थित जो मेरे पितर बान्धवादिक हैं जिनके मरने पर संस्कार नहीं हुआ उनके मोक्षके लिये यह पिण्ड हम देते हैं ॥५१॥ जो कोई प्रेत रूप करके मेरे पितर होवे उन सबको इस पिण्ड दानसे तृप्ति होवै ॥ ५२ ॥ जो मेरे बन्धु हैं अथवा जो बान्धव होंगे

उनकी तृप्ति के लिये यह पिण्डअक्षयहोजावे ॥५३॥ पितृवंश मे मातृ वंशमें गुरू श्वशुर बान्धव हैं ॥५४॥ जो मेरे कुलमें लुप्त पिण्ड है जिनके पुत्र भी नहीं जिनकी क्रिया लुप्त होगई है जो अन्धे पंगुये है ॥ ५५ ॥ जो विरूप हैं जिनको हम जानते हैं अथवा नहीं जानते उनके लिये यह धर्म पिंड हम देते हैं सो अक्षय होवै ॥५६॥ ब्रह्मासे लेकर हमारे पिताके

निबांधवाः ॥ तेषांपिंडोमयादत्तोह्यक्षय्यमुपातिष्ठतु ॥५३॥ पितृवंशेमृतायेचमातृवंशेतथैवच ॥ गुरुश्वशु रबधूनांयेचान्येबांधवादयः ॥ ५४ ॥ येमेकुलेलुप्तपिंडाः पुत्रदारविवर्जिताः ॥ क्रियालोपगतायेचजा त्यंधाःपंगवस्तथा ५५ विरूपाआमगर्भाश्चज्ञाताऽज्ञाताःकुलेमम ॥ धर्मपिंडोमयादत्तोह्यक्षय्यमुपातिष्ठतु ५६ ॥ आब्रह्मणोयेपितृवंशजातामातुस्तथावंशभवामदीयाः ॥ वंशद्वयेस्मिन्ममदासभूताभृत्यास्तथैवाश्रितसेव काश्च ॥ ५७ ॥ मित्राणिसख्यः पशवश्चवृक्षादृष्टाश्चस्पृष्टाश्चकृतोपकाराः ॥ जन्मातरंयेममसंगताश्चते

वंश मे उत्पन्न हैं अथवा माताके वंशमेंउतपन्न हैं और इनवंशो में जो दासहोआये हैं और इन दोनोवंशोके मित्र हैं सखी हैं पशु पक्षी वृक्ष जिनको हम जानते हैं अथवा नहीं जानते हैं जिनको हम देखेसुने हैं यानहीं जो हमारे जन्म

जन्मान्तर के संगी है उनके अर्थ यह स्वधा पिण्ड हम देते हैं ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ इसी प्रकार पुरुष को पुल्लिङ्ग से स्त्रियों को स्त्री लिंग से क्रमानुसार पिण्ड देवें ॥ ५९ ॥ अपने गोत्र मे वा दूसरे गोत्रो मे स्त्री पुरुष को पिण्ड दान अलग २ करैं नहीं तो निष्फल हो जाता है ॥ ६० ॥ जिस पात्र मे पिंडा दिया जावें उस पात्र को तिलो से परिपुर्ण करकें जल

भ्यःस्वधापिंडमहंददामि ॥ ५८ ॥ एतांश्चसर्वमन्त्रांश्चस्त्रीलिंगातानसमुहच ॥ पिंडदद्याद्यथापुर्वस्त्रीणां मात्रादिकान्क्रमात ॥ ५९ ॥ स्वगोत्रेपरगोत्रेचदंपत्योः पिंडदानतः ॥ अपृथकनिष्फलंश्राद्धपिंडेपूदकतर्पण म् ॥ ६० ॥ पिंडपात्रतिलान्कृत्वापुरायश्वाशुभोदकैः ॥ परिषिच्यत्रिधासर्वान्प्रणिपत्यक्षमापयत ॥ ६१ ॥ क्षमापनमंत्रः ॥ येचवात्रयेचास्मा नाशंसते याश्चवोत्रयाश्चास्मानाशंसंते तेचवहंतांनाश्चवहताम तृप्यंतु भवंतस्तृप्यंतुभवत्यस्तृप्यततृप्यततृप्यत ॥ पुत्रान्पैत्रानाभवर्द्धयतीरापोमधुमतीरिमाः स्वधांपितृभ्यो भे

भर देवे ओंर तीन २ बार जल छोड़े कर क्षमापन करे ॥६१॥ क्षमापन मंत्र ॥ जो पुरुष पितर यहां पर हमारी आसा रखते होवे वे सब तृप्त होवै और मेंरे पुत्र पौत्रो को करे फिर पितरो को विसर्जन करके देवतो को साक्षी देवे । हे

ब्रह्मा विष्णु महेश आदि देव हमने जो गयाजी में आकर पितरों को उद्धार किया है इसके आप लोग साक्षी रहीये
६२ हे गदाधर ! भगवान मैं जो गयाजी में आकर पितरों का उद्धार किया है तिसके आप साक्षी है अब मैं तीनों ऋण से
मुक्त हुआ हूं हे नारद ! गयाजी में समस्त स्थानो में पिंड दान करे ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ गयाजी में प्रेत पर्वत पर जाकर

मृतंदुहानाआपोदेवारुक्षयांस्तर्पयतु ॥ पितॄन्विसृज्यचाचम्यसाक्षिणः श्रावयेत्सुरान् ॥ साक्षिणः संतु
मेदेवाब्रह्मेशानादयस्तथा ॥ ६२ ॥ मयागयांसमासाद्यपितॄणांनिष्कृतिःकृता व आगतोस्मिगयांदेवपि
तृकार्येगदाधरः ॥६३॥ त्वमेवसाक्षीभगवन्ननृणाहमृणत्रयात् ॥ सर्बस्थानेषुचैवंस्यात्पिंडदानंतुनारद ॥६४॥
प्रेतपर्वतमारुह्यकुर्यात्तीर्थेषुचक्रमात् ॥ तिलमिश्राँस्ततः सक्तूनिक्षिपेत्प्रेतपर्वते ॥ ६५ ॥ अपसव्येनदेवर्षे
दक्षिणाभिमुखंक्रमात् ॥ येकेचितुप्रेतरूपेणवर्तंते पितरोमम ॥ ६६ ॥ तेसर्वेतृप्तिमायांतुसक्तुभिस्तिलामि

सम्पूर्ण तीर्थों में क्रमानुसार तिल मिश्रित सत्तू ले पिण्ड देवै ॥ ६३ ॥ अपसव्य होकर दक्षिण मुख होकर यह कहै कि
जो मेरे वंश में प्रेत रूप होकर मेरे पितर हैं वह सब इस तिल मिश्रित सत्तू से तृप्त होवै ब्रह्मा से लेकर चर अचर

न से छियों

पर्वत जो मेरे पितर हैं ॥६६॥ ६७ इस मेरे दिये हुये जल से तृप्ती को प्राप्त होवैं और हे नारद ! वह प्रेतत्व से मुक्त हों जावै ॥६८॥ हे नारद ! वह प्रेत शिला का माहात्म्य मैंने आप से वर्णन किया जिसके सुनने से उसके में प्रेत नहीं रहते पितरों के मुक्ति के लिये वही प्रेत शिला गया शिर में रखी है ॥६९॥ और उसी पर आदि गदाधर भगवान तीर्थ मन्त्र

श्रितैः ॥ आब्रह्मस्तंबपर्यंतंयत्किंचित्सचराचरम् ॥६७॥ मयादत्तेनतोयेन तृप्तिमायांतुसर्वशः ॥ प्रेतत्वाच्च विमुक्ताःस्युःपितरस्तस्यनारद ॥ ६८ ॥ प्रेतत्वंतस्यमाहात्म्यात्कुलेचापिनविद्यते ॥ नाम्नाप्रेतशिलाख्याता गयाशिरसिमुक्तये ॥ ६९ ॥ तीर्थमंत्रादिरूपेणस्थितश्चादिगदाधरः ॥ ७० ॥ इति श्रीवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पेगयामा० षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

॥ सनत्कुमारउवाच ॥ आदौतुपंचतीर्थेषुचोत्तरेमानसेविधिः ॥ आचम्यकुशहस्तेनाशिरश्चाभ्युक्ष्यवा

रूप से स्थित है ॥७०॥ इति श्री उन्नाव प्रदेशान्तर्गत बरौढ़ा ग्राम निवासी पं० आनन्द माधव दीक्षितात्मज पं० महाराजदीन दीक्षित कृत भाषा व्याख्यायां गया माहात्म्ये षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

श्री सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ! प्रथम उत्तर मानस में उक्त से ही स्नान को करके पञ्च तीर्थों में आचमन

कर हाथ में कुशा लिये शिर पर जल छिड़के ॥१॥ स्नान करने वाले तीर्थ को प्रणाम करके कहै कि उत्तर मानसमें निज शुद्ध के लियें और सूर्य लोक की प्राप्ति की इच्छा करके पितरों की मुक्ति के लियें स्नान को करते हैं यह कह कर स्नान करै और तर्पण श्रद्ध करके ॥ २ ॥ ३ ॥ इस उत्तर मानसरोवर को मानसरोवरही जानै

रिणा ॥ १ ॥ उत्तरेमानसेगच्छन्मंत्रेणस्नानमाचरेत् ॥ उत्तरेमानसेस्नानंकरोम्यात्मविशुद्धये ॥ २ ॥ सूर्यलोकादिसांसिद्धिसिद्धयेपितृमुक्तये ॥ स्नात्वाथतर्पणंकृत्वाश्राद्धंकृत्वासांपिंडकम् ॥ ३ ॥ मानसंहिसरोय स्मात्तस्मदुत्तरंमानसम् ॥ सूर्यंनत्वार्चयित्वाथसूर्यलोकंनयेत्पितृन् ॥ ४ ॥ ॐनमोभानवेभर्त्रेसोमभौमज्ञ रूपिण ॥ जीवभार्गवशनैश्चरराहुकेतुस्वरूपिणे ॥ ५ ॥ उत्तरान्मानसान्मौनीव्रजेद्दक्षिणमानसम् ॥ दक्षिणे मानसेचैवतीर्थत्रयमुदाहृतम् ॥ ६ ॥ स्नात्वातेषुविधानेनकुर्याच्छ्राद्धंपृथक् पृथक् ॥ उदीचतीर्थमित्युक्तंतत्रो

यहां पर सुर्य भगवान का पुजन करने से यात्री पितरों को सुय लोक पहु चाता है ॥ ४ ॥ हे सुर्य भगवान ६ हे जगतके पालन कर्ता ! हे चंद मंगल बुधरूप । हे गुरू ! हे शूक्र !हे शनेश्वर !हे राहु केतु रूपी ! आपके अर्थ नमस्कार है ॥ ५ ॥ यात्री मौन को धारण किये उत्तर मानस से दक्षिण मानसको जावे दक्षिण मानस में

तीन तीर्थ हैं ॥ ६ ॥ उनमें विधिवत स्नान करके अलग श्राद्ध को करे वहां पर उत्तर दिशामें उदीची तीर्थ है ॥ ७ ॥ यहां के स्नान करने से निज शरीरयुक्त प्राणी स्वर्गको जाता है और तीन लोकने प्रसिध कनखल तीर्थ है॥७॥जहांके स्नान करने से सुवर्णवत शरीर पवित्र हो जाता है तिसके दक्षिण तरफ दक्षिण मानस है ॥८॥फिर यात्री दक्षिणमासने

दीच्यांविसुक्तिदम ॥ ७ ॥ अत्रस्नातोदिवंयातिस्वशरीरेणमानवः॥ मध्येकनखलंतीर्थंत्रिषुलोकेषुविश्रुत ८। स्नात्वाकनकवभातिनरोयातिपवित्रताम ॥ तस्यदक्षिणेभागेचतीर्थंदक्षिणमानसम ॥ ९ ॥ दक्षिणमान सेस्नानकरोस्यात्माविसुध्ये ॥ सुर्यलोकादिसंसुधसिद्ध्योपितृमुक्तय ॥ १० ॥ ब्रह्महत्यादिपापौघघातना यविमुक्तये ॥ दिवाकरकरोमीहस्नानंदक्षिणमानस ॥ ११ ॥ सूर्यनत्वाचस्मृत्वाचसुर्यलोकनयात्पतृन । नमामिसुर्यतृप्त्यर्थपितणांतारणायवै ॥ १२ ॥ पुत्रपौत्रधनैश्वर्यायुशराग्येभिवधये ॥ अनेनस्नानपुजा

आत्मशुद्धि के लिये सूर्यलोककी प्राप्ति और पितरोंको मुक्तिके लिये स्नान करताहूं यह उच्चारण करै॥१०॥हे दिवाकर ब्रह्महत्यादि पापो के नाश हेतु समस्त पापा से मुक्त के लिये दक्षिण मानस मे मैं स्नान को करता हू॥११॥ फिर सूर्य भगवान को नमस्कार स्मरण करके यात्री पितरोको सुलोक पहुचाताहै हे सुर्य भगवान ? आपको तृप्ति और पितरोंके

तारण हेतु आपके अर्थ नमस्कार है ॥ १२ ॥ हे दीनानाथ ! हम पुत्र पौत्र धन ऐश्वर्य आयु आरोग्य की वृद्धि के लिये यह स्नान पूजा श्राद्धादि कर्म करते हैं ॥ १२ ॥ वहां से मौनार्क स्थान में जाकर इसी विधि से प्रणाम आदि करके तीर्थों में उत्तम फल्गूतीर्थ को जावै ॥ १४ ॥ पूर्वही ब्रह्मा करके प्रार्थित विष्णु पितरों के और श्राद्ध करता के तारणार्थ फल्गू रूप.

दिकुर्याच्छ्राद्धमनुत्तमम् ॥ १३ ॥ कृत्वानत्वाचमौनार्कमिमंमंत्रमुदीरयेत् ॥ फल्गुतीर्थंव्रजेत्तस्मात्सर्वतीर्थेत्तिमोत्तमम् ॥ १४ ॥ मुक्तिर्भवतिपितृणांकर्तृणांतरणायच ॥ ब्रह्मणाप्रार्थितोविष्णुःफल्गुरूपोऽभवत्पुरा ॥ १५ ॥ दक्षिणाग्निहुतंनूनंतद्भवंफल्गुतीर्थकम् ॥ तीर्थानियानिसर्वाणिभुवनेष्वखिलेष्वपि ॥ १६ ॥ तानिस्नातुंसमायांतिफल्गुतीर्थेसुरैःसह ॥ गंगापादोदकंविष्णोःफल्गुर्ह्यादिगदाधरः ॥ १७ ॥ स्वयंहिद्रवरूपेणतस्माद्गंगाधिकंविदुः ॥ अश्वमेधसहस्राणांसहस्रंयःसमाचरेत् ॥ १८ ॥ नासौतत्फलमाप्नोतिफल्गुतीर्थेयदाप्नु

होकर स्थित है ॥ १५ ॥ फल्गू तीर्थ में दक्षिणाग्नि ही समझना चाहिये जो पृथ्वीमण्डल में तीर्थ है ॥ १६ ॥ वह सब देवतों सहित फल्गूतीर्थ में प्राप्त हैं आदिगदाधर भगवान् के चरण का धोवन गंगाजी फल्गूरूप से स्थित हैं ॥ १७ ॥ इसी से गंगा से श्रेष्ठ फल्गूतीर्थ कहा जाता है हजार अश्वमेधयज्ञ के करने से जो फल प्राप्त होता है ॥ १८ ॥ वह फल

फल्गूतीर्थ में मास्त से तुलना नहीं कर सक्ता है फल्गूतीर्थ में जो विष्णुजल है उसमें आदरपूर्वक स्नान करै ॥ १९ ॥ तीर्थ है ॥
को विष्णुलोक के प्राप्ति की इच्छा से भुक्ति मुक्तिकी प्राप्ति के लिये फल्गूतीर्थमें यात्री स्नान करके तर्पण और श्राद्ध को करै ॥
सपिंडक और स्वसूत्र पितामह आदिकों इस प्रकार नमस्कार करै शिवके लिये ईशान के अर्थ पुरुषोत्तम के लिये नमस्कार

यात् ॥ फल्गुतीर्थेविष्णुजलेकरोमिस्नानमादृत ॥ १९ ॥ पितॄणांविष्णुलोकायभुक्तिमुक्तिप्रसिद्धेय ॥
फल्गुतीर्थेनरःस्नात्वातर्पणंश्राद्धमाचरेत् ॥ २० ॥ सपिंडकस्त्वसूत्रोक्तंनमेदथपितामहम् ॥ नमःशिवायदे
वायईश नपूरुषायच ॥ २१ ॥ अघोरवामदेवायसद्योजातोशंभवे ॥ फल्गुतीर्थेन
रःस्नात्वादृष्ट्वादेवंगदाधरम् ॥ २२ ॥ आत्मानंतारयेत्सद्योदशापूर्वान्दशापरान ॥ नत्वागदाधरंदेवंमं
त्रेणानेनपूजयेत् ॥ २३ ॥ ॐ नमोवासुदेवायनमःसंकर्षणायच ॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायश्रीधरायचविष्णवे

हैं ॥ २१ ॥ अघोर वामदेव सद्योजात के अर्थ हे शंभो नमस्कार है फल्गूतीर्थ में यात्री स्नानकरके आदि गदाधर भग-
वान का दर्शन करै ॥ २२ ॥ गदाधर भगवान के दर्शन से यात्री के दशपूर्व और दश पर पितर तर जाते हैं इस मंत्र से
आदि गदाधर भगवान का पूजन करै ॥ २३ ॥ वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध श्रीधर विष्णु के लिये नमस्कार हैं ॥ २४॥

पंच तीर्थ में स्नान करने से यात्री पितरों को ब्रह्म लोक पहुंचाता है जो मनुष्य गदाधर भगवान का पञ्चामृत से स्नान कराय पुष्प वस्त्र अलंकार से पूजन नहीं करता है उसका श्राद्ध निष्फल हो जाता है नागकूट गृद्धकूट यूप उत्तरमानस ॥ २५ ॥ २६ ॥ इतना गयाशिर कहा जाता है मुंडपृष्ठ से यह फल्गू तीर्थ उत्तम है ॥ २७ ॥ वहां के श्राद्ध करने से

॥ २४ ॥ पंचतीर्थ्यांनरःस्नात्वाब्रह्मलोकंनयेत्पितॄन् ॥ अमृतैःपंचभिःस्नानंपुष्पवस्त्राद्यलंकृतम् ॥ २५ ॥ नकुर्याद्योगदापाणिंतस्यश्राद्धमपार्थकम् ॥ नागकूटाद्गृध्रकूटाद्यूपाच्चोत्तरमानसात् ॥ २६ ॥ एतद्गयाशिरःप्रोक्तंफल्गुतीर्थंतदुच्यते ॥ मुंडपृष्ठान्नगाधस्तात्फल्गुतीर्थमनुत्तमम् ॥ २७ ॥ तत्रश्राद्धादिनासर्वेपितरोमोक्षमाप्नुयुः ॥ मुखंगयासुरस्यैतत्तस्माच्छ्राद्धमथाक्षयम् ॥ २८ ॥ प्रथमेऽह्निविधिःप्रोक्तोद्वितीयेदिवसेव्रजेत् ॥ धर्मारण्येतत्रधर्मस्तस्माद्यज्ञमकारयत ॥ २९ ॥ गच्छताम्ब्रह्मलोकाप्तिर्भवत्येवंहिनारद ॥ मतंगवाप्यां

पितर मोक्ष को प्राप्त होते हैं कारण यह गयासुर का मुख हैं वहां का श्राद्ध अक्षय होता हैं ॥ २८ ॥ हे नारद ! यह प्रथम दिन की कृत्य मैंने वर्णन किया दूसरे दिन फिर वहां से चलकर जहां पर धर्मराज ने यज्ञ कों किया था उसी धर्मारण्य में जावे ॥ २९ ॥ हे नारद ! वहां के जाने मात्र से ही ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती हैं जो यात्री मतंग बावी ३० ॥

स्नान करके तर्पण श्राध करै वहां पर मतंगेश को इस मंत्र से नमस्कार करैं ॥३०॥ हे मतंगेश! इस तीर्थ मे तीर्थ है ॥ ७ आकर पितरो को उधार किया है उसके साक्षी लोकपाल आदि रहै ॥ ३१ ॥ इस प्रकार की बिधि से कूप यूप के मध्य मैं मतंग तीर्थ पर मनुष्य अपने पितरोको तार देताहैं फिर धर्मधर्मेश्वर महाबिधि वृक्ष को इसमंत्रसे नमस्कारकरे

यःस्नात्वातर्पणंश्राद्धमाचरेत् ॥ गत्वानत्वामतंगशमिमंमंत्रमुदरियत् ॥ ३० ॥ प्रमाणदेवताःसंतुलोकपालाश्चसाक्षिणः ॥ मयागत्यामतंगेऽस्मिन्पितृणांनिष्कृतिःकृता ॥ ३१ ॥ तत्कूपयूपयोर्मध्येसर्वांस्तारयतेपितृन् ॥ धर्मधर्मेश्वरंनत्वामहाबोधितरुनमत् ॥ ३२ ॥ नमस्तेऽश्वत्थराजायब्रह्माबिष्णुमहेश्वर ॥ बोधद्रुमायपितृणांकर्तृणांतारणायच ॥ ३३ ॥ एकादशोऽसिरुद्राणांवसुनामष्टमोवसुः ॥ नारायणासिदेवानांवृक्षराजोसिपिप्पल ॥ ३४ ॥ अश्वत्थरूपिणंदेवंशंखचक्रगदाधरम ॥ नमामिपुंढरीकाक्षशंखरूपधरहरिम ॥ ३५ ॥

हे अश्वत्थराज! ब्रह्मा विष्णु महेश्वर बोधिद्रुम पितरो के शुभ करने वालेके तारणहेतु आपके अर्घ नमस्कार है ३३ हे वृक्षराज! ग्यारह रुद्रों में गयारहवां रुद्र आपही हैं इसी प्रकार आठों वसुओ से वसुदेवो मे नारायण आपके अर्घ नमस्कार है ॥ ३४ ॥ श्रीपीपलवृक्ष रूपदेव शंख चक्र गदा धारण करनेवाले पुंडरीकाक्ष शंखरूपधारी हरि आपके अर्घ

नमस्कार हैं ॥ ३५ ॥ जो मेरे कुल में अथवा मातृवंश में बान्धव लोग दुर्गति में प्राप्त होवें वह सब आपके दर्शन स्पर्श से अक्षय स्वर्ग को जावैं ॥ ३६ ॥ हे वृक्षराज ! गया में आने से मैंने तीनों ऋण दे दिये । आपके प्रसाद से महापाप और संसार से मैं मुक्त हुआ ॥ ३७ ॥ फिर तीसरे दिन ब्रह्मसर पर स्नान करके इस प्रकार विधिवत् सपिण्डकों को श्राद्ध

येऽस्मत्कुलेमातृवंशेबांधवादुर्गतिंगताः ॥ त्वद्दर्शनात्स्पर्शनाच्चैवस्वर्गंयांतितेऽक्षयम् ॥ ३६ ॥ ऋणत्रयं मयादत्तंगयामागत्यवृक्षराट् । त्वत्प्रसादान्महापापाद्विमुक्तोऽहंभवार्णवात् ॥ ३७ ॥ तृतीयेब्रह्मशिरसि स्नात्वाश्राद्धंसपिंडकम् ॥ कृत्वासर्वंप्रमाणेनमंत्रेणविधिवत्सुतः ॥ ३८ ॥ स्नानंकरोमितीर्थेस्मिन्नृणत्रय विमुक्तये ॥ श्राद्धायपिंडदानायतर्पणायविशुद्धये ॥ ३९ ॥ तत्कूपयूपयोर्मध्येब्रह्मलोकेनयेत्पितॄन् ॥ गयां कृत्वोच्छ्रितोयूपोब्रह्मणायूपइत्यपि ॥४०॥ कृत्वाब्रह्मसरःश्राद्धंसर्वांस्तारयतेपितॄन् ॥ यूपंप्रदक्षणीकृत्यवा

करै ॥ ३८ ॥ यात्री यह कहै कि तीनों ऋणके मुक्ति के लिये और श्राद्ध पिंडदान तर्पण के लिये मैं स्नान करता हूं ॥ ३९ ॥ यूप और कूप के मध्य में श्राद्ध व पिंडदान करने से पितर ब्रह्मलोक को जाते हैं उसी यूप को ब्रह्मा जी ने स्थाप[illegible] है ॥ ४० ॥ ब्रह्मसर पर श्राद्ध को करके यात्री पितरों को तार देता है, यूप कें प्रदक्षिणा करने से वाजपेय [illegible]

की प्राप्ति होती है ॥ ४१ ॥ ब्रह्माजी के नमस्कार करने से पितर ब्रह्मलोक को जाते हैं इस प्रकार ब्रह्माजी
करै, ब्रह्मा अब संसार के जन्मदाता आपके अर्थ नमस्कार है ॥ ४२ ॥ भक्त पितरों के तारण हेतु आपके अर्थ बार ॥ ८
स्कार है गोप्रचार के निकट ब्रह्मा करके कल्पित आम्रवृक्ष है ॥ ४३ ॥ तिसके सींचने मात्रसे ही पितर मोक्ष को प्राप्त होते हैं

जपेयफलंलभेत् ॥ ४१ ॥ ब्रह्माणंचनमस्कृत्यब्रम्हलोकंनयेत्पितॄन् ॥ ॐ नमोब्रह्मणेऽजायजगज्जन्माधि
कारिणे ॥ ४२ ॥ भक्तानांचपितॄणांचतारणायनमोनमः ॥ गोप्रचारसमीपस्थोआम्राब्रह्मप्रकल्पिताः ॥
॥४३॥ तेषांसिंचनमात्रेणपितरोमोक्षगामिनः ॥ आम्रब्रह्मसरोद्भूतंसर्वदेवमयंतरुम् ॥ विष्णुरूपंप्रसिंचा
मिपितॄणांमुक्तिहेतवे ॥ ४४ ॥ एकोमुनिःकुंभकुशाग्रहस्तआम्रस्यमूलेसलिलंददानः ॥ आम्राश्चसिक्ताः
पितरश्चतृप्ताएकाक्रियाद्व्यर्थकरीप्रसिद्धा ॥ ४५ ॥ ततोयमबलिंक्षिप्त्वामंत्रेणानेनसंयुतः ॥ यमराजधर्म

आम्रवृक्षसर से उत्पन्न सर्वदेवमय वृक्ष विष्णुरूपी को पितरों के तारण हेतु मैं सिंचन करता हूं ॥ ४४ ॥ हे आम्रवृक्ष !
पूर्व समय में किसी मुनिने जलकुम्भ को लिये कुशा से सायंकाल सन्ध्या करते भये तो उस जल के पढने से उनके पितर
तर गये तभी से यह कथा प्रचलित है कि, 'एक पन्थ दो काज' इसी आम्रसेचन से हुये ॥ ४५ ॥ फिर इस मन्त्र से यमबलि

को देवै । हे यमराज ! हे धर्मराज ! जो आप गयासुर के निश्चलार्थ यहांपर स्थित हैं तिनके लिये पितरों के मोक्षार्थ यह बलि हम देते हैं बाद इस मन्त्र से श्वानबलि को देवै ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ वैवस्वत वंश में उत्पन्न श्याम सबल नामक कुत्तों को यह बलि देते हैं हमारे पितरों को मार्ग में रक्षा करना ॥ ४८ ॥ फिर काकबलि को देकर स्नान करे ऐन्द्र वरुण वायव्य याम्य

राजौनिश्चलार्थंव्यवस्थितौ ॥४६॥ ताभ्यांबलिंप्रदास्यामिपितॄणांमुक्तिहेतवे ॥ ततः श्वानबलिंक्षिप्त्वा मंत्रेणानेनसंयुतः ॥ ४७ ॥ श्वानौद्वौश्यामशबलौवैवस्वतकुलोद्भवौ ॥ ताभ्यांबलिंप्रदास्यामिरक्षेतांपथि सर्वदा॥४८॥ततःकालबलिंक्षिप्त्वापुनःस्नानंसमाचरेत् ॥ ऐंद्रवारुणवायव्यायाम्यांवैनैर्ऋतास्तथा ।४९। वायसाःप्रतिगृह्णंतुभूम्यांपिंडमयोज्झितम्॥।फल्गुतीर्थेचतुर्थेऽह्निगत्वास्नानादिकंचरेत् ॥५०। गयाशिरसियच्छ्राद्धंपदेकुर्यात्सापिंडकम् ॥ साक्षाद्गयाशिरस्तत्रफल्गुतीर्थाश्रितकृतम् ॥ ५१ ॥ नगाज्जनार्द्दना

नैर्ऋत्य वायस भूमि में क्षिप्त हमारे पिण्ड को ग्रहण करै फिर चौथे दिन फलगूतीर्थ में जाकर स्नानादिक करै ॥ ४९ ॥ ५० ॥ जो श्राद्धादिक गयासुर के शिर पर करै सोई सपिण्डपदपर करै वह फलगूतीर्थ रूप वह गयासुर का शिर है । ५१ ॥

हे नारद ! जनार्दन पर्वत से ब्रह्मकूप से उत्तर मानस से यह गयासुर का शिर कहा जाता है अतः फलगु [illegible] है ॥ ४
श्रेष्ठ है ॥ ५२ ॥ पितामह तीर्थ से उत्तर मानस तीर्थ तक फल्गूतीर्थ है जो देवतों को भी दुर्लभ है ॥ ५३ ॥ क्रौंचपदतीर्थ
से फल्गूतीर्थ पर्यन्त गयासुर का शिर है वहीं पर गयासुर का मुख कहा जाता है इसी से वहां का श्राद्ध अक्षय हो जाता

द्ब्रह्मकूपादुत्तरमानसात् ॥ एतद्गयाशिरः प्रोक्तंफल्गुतीर्थंतदुच्यते ॥ ५२ ॥ पितामहंसमासाद्ययावदुत्त
रमानसात् ॥ फल्गुतीर्थंतुविज्ञेयंदेवानामपिदुर्लभम् ॥५३॥ क्रौंचपादात्फल्गुतीर्थंयावत्साक्षाद्गयाशिरः॥
मुखंगयासुरस्यैवतस्माच्छ्राद्धमथाक्षयम् ॥ ५४ ॥ मुंडपृष्ठान्नगाधस्तात्सक्षात्तत्फल्गुतीर्थकम् ॥ आद्यो
गदाधरोदेवोव्यक्ताव्यक्तोव्यवस्थितः ॥ ५५ ॥ विष्ण्वादिपदरूपेणपितृणांमुक्तिहेतवे ॥ तत्रविष्णुपदं
दिव्यंदर्शनंपापनाशनम् ॥ ५६ ॥ स्पर्शनंपूजनंचैवपितृणांदत्तमक्षयम् ॥ श्राद्धंसपिंडकंकृत्वाकुलसाह

है ॥ ५४ ॥ मुण्डवृक्ष से लेकर फल्गुतीर्थ तक साक्षात् आदि गदाधर भगवान् प्रगट व अप्रगट रूप से स्थित रहते हैं ॥ ५५ ॥
विष्णु आदिक पद रूप से पितरों के तारण हेतु भगवान स्थित हैं इसी से विष्णुपद के दर्शन मात्र से महा पाप का नाश हो
जाता है ॥ ५६ ॥ जिनके स्पर्श पूजन पितरों को अक्षय पद देनेवाला है जहां पर सपिण्डकों को श्राद्ध करने से ही एक

हजार कुल सहित ॥ ५७ ॥ अव्यय अनन्त कल्याणप्रद विष्णुपद को प्राप्त होता है जो यात्री रुद्रपद पर श्राद्ध करता है वह एक सौ कुल को ॥ ५८ ॥ शिवपुर (कैलास) को प्राप्त कर देता है और जो ब्रह्मपद पर पिण्डदान करता है वह एकसौ कुल को उद्धार करके ब्रह्मलोक में पितरों को पहुँचा देता है ॥ ५९ ॥ दक्षिणाग्निपद पर श्राद्ध करने से वाजपेययज्ञ

समात्मनः ॥५७॥ नयेद्विष्णुपदंदिव्यमनन्तंशिवमव्ययम् ॥ श्राद्धंकृत्वारुद्रपदेनयेत्कुलशतंनरः ॥५८॥ सहात्मानंशिवपुरंतथाब्रह्मपदेनरः ॥ ब्रह्मलोकंकुलशतंसमुद्धृत्यनयेत्पितृन् ॥५९॥ दक्षिणाग्निपदेश्राद्धं वाजपेयफलंलभेत् ॥ गार्हपत्यपदेश्राद्धीराजसूयफलंलभेत् ॥ ६० ॥ श्राद्धंकृत्वाहवनीयेपदेऽश्वमेधफलंल भेत् ॥ श्राद्धंकृत्वासभ्यपदेज्योतिष्टोमफलंलभेत् ॥ ६१ ॥ आवसथ्यपदेश्राद्धीसोमलोकंनयेत्पितॄन् ॥ श्राद्धंकृत्वाशक्रपदेइन्द्रलोकमवाप्नुयात् ॥६२॥ अगस्त्यस्यपदेश्राद्धीपितॄन्ब्रह्मपुरंनयेत् ॥ क्रौंचमातंगयो

का फल प्राप्त होता है गार्हपत्यपद पर श्राद्ध करने से राजसूय यज्ञ का फल मिलता है ॥ ६० ॥ आहवनीय पद पर श्राद्ध करने से अश्वमेधयज्ञ का फल और सभ्यपद पर श्राद्ध करने से ज्योतिष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त होता है ॥ ६१ ॥ आवसथ्यपद पर श्राद्ध करनेवाला यात्री चन्द्रलोक पितरों को प्राप्त करता है और इन्द्रपद पर श्राद्ध करने से इन्द्रलो[illegible]

होता है ॥ ६२ ॥ यात्री अगस्त्यपदपर श्राद्ध करके पितरों को ब्रह्मपुर पहुंचाता है और क्रौंच मतङ्गपद पर श्रा[illegible] है ॥ [illegible]स वाला पितरों को ब्रह्मलोक पहुंचाता है ॥ ६३ ॥ घोर पापी भी सूर्यपद पर श्राद्ध करके पितरों को सूर्यलोक प्राप्त करता है कार्तिकेय पद पर श्राद्ध करनेवाला यात्री पितरों को कैलास प्राप्त कराता है ॥ ६४ ॥ गणेशपद पर श्राद्ध करने से पितर

श्राद्धीब्रह्मलोकेनयेत्पितॄन् ॥ ६३ ॥ श्राद्धीसूर्यपदेपंचपापिनोऽर्कपुरंनयेत् ॥ कार्तिकेयपदेश्राद्धीशिवलोकंनयेत्पितॄन् ॥ ६४ ॥ गणेशस्यपदेश्राद्धीरुद्रलोकंनयेत्पितॄन् ॥ गजकर्णिकायांतर्पणकृन्निर्मलंस्वर्नयेत् पितॄन् ॥ ६५ ॥ अन्येषांचपदेश्राद्धीपितॄन्ब्रह्मपुरंनयेत् ॥ सर्वेषांकश्यपश्रेष्ठंविष्णोरुद्रस्यवापदम् ॥ ६६ ॥ ब्रह्मणोऽपिपदंश्रेष्ठंसर्वेषांतत्रकीर्तितम् ॥ प्रारंभेचसमासौचतेषामन्यतमंस्मृतम् ॥ ६७ ॥ श्रेयस्करंभवेत्तत्र श्राद्धंकर्तुंश्चनारद ॥ कश्यपस्यपदेदिव्येभारद्वाजोमुनिःपुरा ॥ ६८ ॥ श्राद्धंकृत्वोद्यतोदातुंपित्रादिभ्यश्च

रुद्रलोक जाते हैं और गजकर्णिका में तर्पण करने से पितर स्वर्ग को जाते हैं ॥ ६५ ॥ अन्य पदों पर श्राद्ध करने से पितर ब्रह्मलोक को चले जाते हैं। हे नारद ! समस्त पदो में काश्यप पद विष्णुपद रुद्रपद व ब्रह्मपद अधिक श्रेष्ठ कहे गये हैं इसी लिये आदि अन्त में यहां की कृत्य अलगही है ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ हे नारद ! यहां के श्राद्ध करने वाला कल्याण को पाता

है प्रथम काश्यप पद पर भारद्वाज मुनि श्रद्ध को करके ज्योंही पिण्डदान देने लगे त्योंही पद को फोड कर कृष्ण और शुक्ल रङ्ग के दो हाथ निकले ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ दो हाथ देख कर मुनि भारद्वाज बड़े ही संशय में प्राप्त हो गये तो मुनिने निज माता शान्ता से पूंछा कि किस हाथ में पिण्ड देऊँ इस दिव्य काश्यप पद पर या कृष्ण शुक्ल हाथ पर पिण्ड देऊँ हे मात ! मैं नहीं

पिण्डकम् ॥ कृष्णशुक्लौततोहस्तौपदमुद्भिद्यनिर्गतौ ॥ ६९ ॥ दृष्ट्वाहस्तद्वयंतत्रमुनिसंशयमागतः ॥ ततःस्वमातरंशांतांभारद्वाजश्चपृष्टवान् ॥ ७० ॥ कश्यपस्यपदेदिव्येकृष्णेशुक्लेऽथवाकरे ॥ पिण्डोदेयोम यामातर्जानासिपितरंवद ॥ ७१ ॥ शांतोवाच ॥ भारद्वाजमहाप्राज्ञदेहिकृष्णायपिण्डकम् ॥ भारद्वाजस्त तःपिण्डंदातुंकृष्णायचोद्यतः ॥ ७२ ॥ श्वेतोदृश्योऽब्रवीत्तत्रपुत्रस्त्वंहिममौरसः ॥ कृष्णोऽब्रवीन्ममक्षेत्रं ततोमेदेहिपिण्डकम् ॥ ७३ ॥ शुक्लोऽब्रवीत्स्वैरिणीयंपुत्रस्त्वंहिममौरसः ॥ स्वैरिण्यथाब्रवीद्वाक्यंक्षेत्रिणे

जानता हूं मुझ से कहो ॥ ७० ॥ ७१ ॥ शान्ता बोली कि हे भारद्वाज ! हे महाप्राज्ञ तुम काले हाथ में पिण्ड को देवो यह सुन कर भारद्वार जब काले हाथ में पिण्ड को देने लगे ॥ ७२ ॥ तो शुक्ल हाथ बोला कि तुम हमारे औरस पुत्र हो तुम हमको पिण्ड देव कृष्ण हाथ बोला कि यह हमारा क्षेत्र है इस लिये हमारे हाथ पर पिण्ड देवो ॥ ७३ ॥ निदान शुक्ल हा[illegible]

कि यह स्वैरिणी है और तुम हमारे औरस पुत्र हो हमारे ही हांथपर पिण्ड देवो तब शान्ता बोली कि तुम दोनों [illegible] ॥
पिण्ड दान करो ॥ ७४ ॥ तब भारद्वाज ने काश्यप पद पर पिण्ड दान किया उसी वक्त पिंड देतेही दोनों शुक्ल कृष्ण हाथ
विमान में चढकर ब्रह्म लोक को चले गये ॥ ७५ ॥ रामचन्द्रजी भी रुद्र पद पर जिस समय पिण्ड दान करने लगे उसी

वीर्यिणेततः ॥७४॥ भारद्वाजस्ततःपिण्डंकश्यपस्यपदेददौ ॥ हंसयुक्तविमानेनब्रह्मलोकंसुभौगतौ ॥७५॥
रामोरुद्रपदेश्राद्धीपिण्डदानायचोद्यतः ॥ पितादशरथःस्वर्गेप्रसार्यकरमागतः ॥ ७६ ॥ नादात्पिण्डंकरे
रामोददौरुद्रपदेततः ॥ शास्त्रार्थातिक्रमाद्भीतोराममंदशरथोऽब्रवीत् ॥ ७७ ॥ तारितोहंत्वयापुत्ररुद्रलोक
मवाप्नुयाम् ॥ हस्तेपिण्डप्रदानेनस्वर्गतिर्नहिमेभवेत् ॥ ७८ ॥ त्वंचराज्यंचिरंकृत्वापालयित्वाद्विजान्प्र-
जाः ॥ यज्ञान्सदक्षिणान्कृत्वाविष्णुलोकंव्रजिष्यसि ॥ ७९ ॥ पुर्ययोध्याजनैःसार्द्धपक्षिकीटादिभिःसह॥

समय स्वर्ग से दशरथजी आकर हाथ पसार उपस्थित हुये ॥ ७६ ॥ तो रामजीने हाथ में पिण्ड नहीं दिया रुद्र पद पर
ही पिंड दान करते भये यह अतिक्रम देख कर दशरथजी राम से बोले ॥ ७७ ॥ हे पुत्र ! मैं तुम से अति प्रसन्न हूं आप
के पिण्ड देने से मैं रुद्र लोक को प्राप्त हूं ॥ यदि हाथ में पिण्ड देते तो मेरी स्वर्ग गति नहीं होती ॥ ७८ ॥ तुम बहुत काल

तक राज्य को करके ब्राह्मण और प्रजा को पालन करके दक्षिणा युक्त यज्ञों को करके पुर अजोध्या सहित कीट पतङ्ग युक्त विष्णु लोक तुम जावोगे यह कहकर दशरथजी रुद्रलोक को चले गये ॥ ७९ ॥ ८० ॥ जिस समय भीष्म पितामह दिव्य विष्णु पद पर श्राद्ध को करके पिण्ड दान करने को उद्यत हुये तो ॥ ८१ ॥

इत्युक्त्वासौदशरथोरुद्रलोकंपरंययौ ॥ ८० ॥ भीष्मोविष्णुपदेदिव्येआजुहावस्वकान्पितॄन् ॥ श्राद्धंकृत्वाघतोदातुंपित्रादिभ्यश्चपिण्डकम् ॥ ८१ ॥ पितुर्विनिर्गतौहस्तौगयाशिरसिशंतनोः। नादात्पिण्डंकरेभीष्मोददौविष्णुपदेततः ॥८२॥ शंतनुःप्राहसंतुष्टःशास्त्रार्थेनिश्चलोभव ॥ त्रिकालदृष्टिर्भवतुअंतेविष्णुश्चतेगतिः ॥ ८३ ॥ स्वेच्छयामरणंचास्तुइत्युक्त्वामुक्तिमागतः ॥ कनकेशंचकेदारंनारसिंहंचवामनम्॥ ॥ ८४ ॥ रथमार्गसमभ्यर्च्यपितॄन्सर्वांश्चतारयेत् ॥ गयाशिरसियःपिण्डंयेषांनाम्नातुनिर्वपेत् ॥ ८५ ॥

गयाशिर में पिता शन्तनु का हाथ निकला तब भीष्म पितामह ने हाथ पर पिण्ड नहीं दिया और विष्णु पद पर ही पिण्ड देते भये ॥ ८२ ॥ तब प्रसन्न होकर शन्तनु बोले कि मैं तुमसे अति प्रसन्न हूं शास्त्रार्थ से तुम अति निश्चल होवो तुमारी त्रिकाल दृष्टि होगी और अन्त में विष्णुपुर जावोगे ॥ ८३ ॥ स्वेच्छा से तुमारी मृत्यु होगी यह कह कर शन्तनु मु[illegible]

हे नारद ! गयाजी में कनकेश केदार नरसिंह वामन और रथमार्ग को पूजा करने से पितर तर जाते हैं गयाशिर[illegible] है ॥ जिनके नाम से पिण्ड देता है ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ वह नरक में यदि स्थित होवें तो स्वर्ग जाता है और स्वर्ग स्थित मोक्ष होता है गयाशिर में जो छीकुर के पत्ते की सदृश कन्दमूल फल का पिण्ड देता है तो वह पितरों को स्वर्ग पहुंचा देता

नरकस्थादिवंयांतिस्वर्गस्थामोक्षमाप्नुयुः ॥ गयाशिरसियः पिंण्डशमीपत्रप्रमाणतः ॥ ८६ ॥ कन्दमूल फलाद्यैर्वादद्यात्स्वर्गनयेत्पितॄन् ॥ पदानियत्रदृश्यंतेविष्णवादीनांतदग्रतः ॥ ८७॥ श्राद्धंकृत्वातेषुपिण्डांस्तेषांलोकंनयेत्पितॄन् ॥ सर्वत्रमुंडपृष्ठाद्रिःपादैरेभिःसुलक्षितः॥ ८८ ॥ प्रयांतिपितरःसर्वेब्रह्मलोकमनामयम् ॥८९॥ पंचमेह्निगदालोलेस्नानंकृत्वासपिण्डकम् ॥९०॥ श्राद्धेपितॄन्ब्रह्मलोकंनयेदात्मानमेवच ।

है गयाजी में विष्णु आदिक जो पद है ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ उनमें जो श्राद्ध को करके पिण्ड देते हैं तो उनके पितर स्वर्ग चले जाते हैं गयाजी में विष्णु आदिक पदों से घिरा हुआ मुण्डपृष्ठ पर्वत है ॥ ८८ ॥ यहां के पिंडदान करने से पितर ब्रह्म लोक जाते हैं ॥ ८९ ॥ पांचवें दिन गदालोल स्नान करके सपिंडकों का ॥ ९० ॥ श्राद्ध करने से निज सहित ब्रह्मलोक

प्राप्त होती है गदालोल नाम तीर्थ सब से श्रेष्ठ हैं ॥ ९१ ॥ पूर्वही हेतिराक्षस के शिर को दो टुकड़ा करके विष्णु ने यहीं पर गदा को धोया था तभी से गदालोल नामक यह तीर्थ प्रसिद्ध हुआ ॥ ९२ ॥ गदा के धोये हुये गदालोल नामक तीर्थ में अक्षय स्वर्ग के प्राप्ति हेतु मैं स्नान करता हूं ॥ ९३ ॥ ब्रह्म कल्पित ब्राह्मणों को वहीं पर भोजन देवै उनके

गदालोलमितिख्यातंसर्वेषामुत्तमोत्तमम् ॥ ९१ ॥ हेत्यासुरस्ययच्छीर्षंगदयाचद्विधाकृतम्॥ यतःप्रक्षालितातीर्थेगदालोलंततःस्मृतम् ॥ ९२॥ गदालोलंमहातीर्थेगदाप्रक्षालनेवरे ॥ स्नानंकरोमिशुद्ध्यर्थमक्षय्यायस्वराप्तये ॥९३॥ ब्रह्मप्रकल्पितान्विप्रान्भोजयेत्तोषयेत्ततः॥ तैस्तुष्टैस्तोषिताःसर्वाः पितृभिः सहदेवताः ॥ ९४ ॥ कृतेश्राद्धऽक्षय्यवटेअन्नेनैवप्रयत्नतः ॥ दृष्ट्वानत्वाचसंपूज्यवटेशंचसमाहितः ॥ ९५ ॥ पितॄन्नयेत्ब्रह्मलोकमक्षय्यंचसनातनम् ॥ वटवृक्षसमीपेचशाकेनाप्युदकेनवा ॥ ९६ ॥ एकस्मिन्भोजितेविप्रेको

सन्तुष्ट होने से पितर सहित देवता भी प्रसन्न होते हैं ॥ ९४ ॥ फिर अक्षयवट पर जाकर अन्न से श्राद्ध करै और साव- धान चित्त से वटेश्वर का दर्शन पूजन करै तो पितर अक्षय ब्रह्म लोक को प्राप्त होते हैं बरगद के निकट [illegible]

जलसे ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ एक ब्राह्मण के भोजन करानेसे ही कोटि ब्राह्मण के भोजन का फल मिलता है गयाज[illegible] है ॥ [illegible]
पृष्ठ ब्रह्मशिर पर गया शिर में बरगद के पास पुरोहित को षोड़शोपचार से पूजन करने में पितरों को अक्षय पुण्य
मिलता है ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ एकार्णव में वटवृक्ष के आगे बालरूप धारण करके जो योगनिद्रा से शयन करते हैं

टिर्भवतिभोजिता ॥ गयायांधर्मपृष्ठेचशिरसिब्रह्मणस्तथा ॥९७॥ गयाशीर्षेवटेचैवपितृणांदत्तमक्षयम् ॥
देयंदानंशोडशकंगयातीर्थेपुरोधसे ॥ ९८ ॥ वस्त्रगंधादिभिःसम्यक्संपूज्यचप्रयत्नतः ॥ ९९ ॥ एकार्णवे
वटस्याग्रेयःशेतेयोगनिद्रया ॥ १०० ॥ बालरूपधरस्तस्मैनमस्तेयोगशायिने ॥ संसारवृक्षशस्त्रायाशेषपाप
हरायच ॥ १०१ ॥ अक्षय्यब्रम्हदात्रेचनमोऽक्षय्यवटायवै ॥१०२॥ कलौमाहेश्वरालोकायेनतस्माद्गदाधर॥
लिङ्गरूपंभवन्तंचवंदेश्रीप्रपितामहम् ॥ १०३ ॥ इतिवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पेगयामहात्म्येसप्तमोध्यायः ७

संसार रूपी वृक्ष कुठार पाप के नाश कर देने वाले उनके अर्थ नमस्कार है ॥ १०० ॥ १०१ ॥ अक्षय ब्रह्म के देने वाले अक्षय
वट रूप को नमस्कार है ॥ १०२ ॥ कलियुग में माहेश्वर रूप से देवता वास करते हैं अतः हे लिङ्गरूपी गदाधर ! हे ब्रह्मन् !
आप को नमस्कार है ॥ १०३ ॥ इति श्री उन्नाव प्रदेशान्तर्गत बरौड़ाग्राम निवासी पं० आनन्द माधव दीक्षितात्मज

पं० महाराजदीन दीक्षित कृत भाषा व्याख्यायां गया माहात्म्ये सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥
श्री सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ! गयराज ने बहुत सा द्रव्य युक्त अन्न वस्त्र दक्षिणा देदेकर ब्राह्मणों को बुलाय यज्ञ किया था जिस यज्ञ के द्रव्य की संख्या करने को हम नहीं समर्थ हैं ॥ १ ॥ जिस अन्न की ढेरियों से गया जी में पचीसों पर्वत प्रतीत होने लगे दक्षिणा की द्रव्य तो मानो आकाश में जैसे तारा होवें पृथ्वी में बालू तद्वत प्रतीत होने लगा ॥ २ ॥ सुवर्णादिक

॥ सनत्कुमारउवाच ॥ यज्ञंचक्रेगयांराजाबह्वन्नंबहुदक्षिणम् ॥ यत्रद्रव्यसमूहानांसंख्यांकर्तुंनशक्यते ॥ १ ॥ स्थितागयायामन्नानांपर्वताःपंचविंशतिः ॥ सिकतावायथालोकेयथाचदिवितारकाः ॥ २ ॥ तथा बहुसुवर्णाद्यैरसंख्याताः सुदक्षिणाः ॥ नैवेहकेचिदिहनकरिष्यंतितथापरे ॥ प्रविश्यंतिद्विजास्तुष्टादेशेदेशेसुपूजिताः ॥ गयंविष्ण्वादयस्तुष्टावरंब्रूहीतिचाब्रुवन् ॥ ४ ॥ गयस्तान्प्रार्थयामासविप्राः शप्ताश्चयेपुरा ॥ ब्रह्मणातेद्विजाःपूताभवन्तुक्रतुपूजिताः ॥ ५ ॥ गयाश्राद्धविधानायद्विजामूर्ताश्चतुर्दश ॥ तेषांवाक्यंप्रकुर्वीतयदिब्रह्मास्वयंभवेत् ६ गौतमंकाश्यपंकौत्सकौशिकंकण्वमेवच ॥ भारद्वाजंह्यौशनसंवात्स्यंपाराशरंतथा ॥ ७ ॥

दक्षिणा ब्रह्मणों को असंख्य देते भया गय राजा की तुल्य न कोई होगा न हुआ है ॥ ३ ॥ अनेक देशों के ब्राह्मण लोग भली भांति सन्तुष्ट हो कर निज २ देशों को गये विष्णु आदि देवता प्रसन्न हो कर वरं ब्रूहि कहा ॥ ४ ॥ तब गय राजा ने कहा कि यदि आप लोग मुझ पर प्रसन्न हैं तो यह वर दीजिये कि पूर्वही शापित ब्राह्मण लोग यज्ञ में शामिल किये जावैं और यह पवित्र हो जावैं ॥ ५ ॥ गयाजी में चौदह गोत्रवाले जो ब्राह्मण हैं वह सब पूजित होवैं ब्रह्मा भी उनके वचन को माने ॥ ६ ॥ गौतम काश्यप कौत्स

कण्व भारद्वाज औसनस वत्स पाराशर सनत्कुमार मण्डव्य लौगाक्षि लोमश वशिष्ट अत्रि यह चौदह गोत्र हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥ ... मेरे नाम से प्रसिद्ध होवै जिस प्रकार ब्रह्मा से ब्रह्मपुर प्रसिद्ध है यह वर दीजिये देवतों ने एवमस्तु कह कर अन्तर्ध्यान होगये ॥ ९ ॥ गयराजा भी यहां के सांसारिक भोगों को भोग करके विष्णुलोक को चला गया। पूर्व समय विशालापुरी में एक विशाल नामक राजा हुये वह ब्राह्मणोंसे बोले कि ॥१०॥ हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! हमारे पुत्र नहीं है सो किस प्रकार पुत्र उत्पन्न होगा सो मुने बताइये ब्राह्मणोंने कहा

सनत्कुमारंमांडव्यंलौगाक्षिंलोमशंमहत् ॥ वासिष्टचतथात्रेयंगोत्राण्येषांचतुर्दश ॥ ८ ॥ गयापुरीति मन्नाम्नाख्याताब्रह्मपुरंतथा ॥ एवमस्तुवरंदत्वातथाचांतर्दधुस्सुराः ॥ ९ ॥ गयश्चभोगान्संभुज्यविष्णुलोकपरंययौ ॥ विशालायांविशालोभूद्राजपुत्रोब्रवीद्विजान् ॥१०॥ कथंपुत्रादयोमेस्तुविशालंचाब्रुवन्द्विजाः गयायांपिंडदानेनतवसर्वंभविष्यति ॥११॥ विशालोपिगयाशीर्षेपिंडदःपुत्रवानभूत् ॥ दृष्ट्वाकाशेसितंरक्तं कृष्णंपुरुषमब्रवीत् ॥ १२ ॥ केयूयंतेषुचैवैकः सितः प्रोचविशालकम् ॥ अहंसितस्तेजनकइंद्रलोकादिहा गताः ॥१३॥ ममपुत्रपितारक्तोब्रह्महापापकृत्तमः ॥ अयंपितामहःकृष्णऋषयोयेनघातिताः ॥१४॥अवाचिन

कि गयाजी में पिंडदान करने से पुत्र उत्पन्न होगा ॥ ११ ॥ विशाल भी गयाशिर पर पिंडदान करते भया और उसके पुत्र उत्पन्न होते भया जिस समय वह पिंडदान किया तो उसी समय श्वेत रक्त कृष्ण तीन वर्ण के तीन पुरुषों को आकाशमार्ग में देखते भया और बोला कि ॥ १२ ॥ आपलोग कौन हैं ? यह सुनि श्वेत पुरुष बोला कि मैं तुमारा पिता हूं इन्द्रलोक से यहांपर

आया हूं ॥ १३ ॥ यह रक्त पुरुष ब्राह्मण के मारने वाले पाप कर्म मेरे पिता हैं और कितने ही ऋषियों के मारने वाले पितामह यह मेरे दादा हैं ॥ १४ ॥ यह दोनो जन अबिचि नामक नर्क में पतित थे सो आपके पिंडदान करने से यह सब लोग मुक्त हो गये अब हम लोग अक्षय स्वर्ग को जाते हैं ॥ १५ ॥ हे अरिंदम ! जो तूने पितामह प्रपितामह के नाम से प्रसन्नतार्थ जल दान किया है ॥ १६॥ उसी से हम लोग यहां पर आकर उपस्थित हुये हैं पुत्र को उचित है कि इसी भांति पितरों को पिंड दान करके मुक्त करैं ॥ १७ ॥

स्संप्राप्तौमुक्तौत्वत्पिंडदानतःमुक्तिःकृतात्वयापुत्रव्रजामः स्वर्गमव्ययम् ॥१५॥ तातंपितामहंचैवतथैवप्रपितामहम् ॥ प्रीणयामीतियत्तोयंत्वयादत्तमरिंदम ॥१४॥ तेनास्मद्युगपद्योगोजातोवाक्येनसत्तमा ।एवपुत्रपितॄणांचकर्तव्यामुक्तिरुत्तमा ॥ १६ ॥ त्वंचराज्यंचिरंकृत्वाभुक्त्वाभोगान्सुदुर्लभान् । यज्ञान्सदक्षिणांकृत्वाअंतेविष्णुपुरंव्रज ॥१८॥ तत्रभोगैःसुतृप्तस्त्वमन्तेमोक्षमवाप्स्यसि ॥ एवंलब्धवरोराजाराज्यंभुक्त्वा दिवंगतः ॥ १९ ॥ प्रेतराजःसहप्रेतैर्गयाश्राद्धदिवंगतः ॥ प्रेतःकाश्चित्स्वमुक्त्यर्थंवणिजंकंचिदब्रवीत् ॥२०॥ ममनाम्नागयाशीर्षेपिंडनिर्वपणंकुरु ॥प्रेतभावविमुक्त्यर्थंत्वंगृहस्थधनंमम ॥ २१ ॥ तद्धनंसर्वमादायगया

तुम बहुत काल तक राज्य करके यहां के सांसारिक भोगों को भोग कर अन्त में यमादिक कर्म करके विष्णु पुर वैकुंठको जावोगे ॥१८॥ वहां पर भी तू भोगों से तृप्त होकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त होवोगे इस प्रकार वर को पाय विशाल राजाने सुख भोग कर अन्त में वैकुंठ चला गया ॥१९॥ यह कथा कह कर सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ! एक अपूर्व कथा सुनो एक प्रेतराज ने एक वनिया से कहा [illegible] का दान ...सिद्ध है श्राद्ध

रे नाम से गया जी में पिण्ड दान करो और मेरा गृहस्थी का धन लेलो ॥ २१ ॥ वह धन लेकर गया क्षेत्र [illegible] है ॥ [illegible]
हे वणिक ! हमारे द्रव्य के सोलह भाग करो उस में से पांच भाग तुम को हम देते हैं सो लो और ग्यारह भाग का गयाजी
में मेरे नाम से खर्च करदो यह सुन कर वणिया गयाजी में जाकर गया शिर में उस प्रेत के नाम सें पिंड दान करते भ-
या और अपने पितरों को भी पिण्ड दिया तो प्रेत प्रेतत्व से छूट कर स्वर्ग को चला गया और वणियां निज गृह को चला

यज्ञेव्ययंकुरु ॥ षोडशेपंचभागांश्चतुभ्र्यंवैदत्तवानहम् ॥२२॥ स्वनामानियथान्यायंसम्यगाख्यातवान्रहः॥
गत्वावणिक्गयाशीर्षेप्रेतराजायपिंडकम् ॥ २३ ॥ प्रददौमनुजःसार्धस्वपितृभ्यंस्ततोददौ ॥ प्रेताः प्रेतत्व
निर्मुक्तावणिक्तुगृहमागतः ॥ २४ ॥ एवंगयस्यशंभोश्चक्षेत्रविष्णोःस्वयंभुवः ॥ उपोषितोथगायत्री
तीर्थेमहानदीस्थिते ॥२५॥ गायत्र्यांपुरतः स्नात्वाप्रातःसंध्यामुपासयेत् ॥ श्राद्धंसपिंडकंयेषांनयेद्ब्रह्म
ण्यतांकुलम् ॥२६॥ तीर्थेसमुद्यतेस्नात्वासावित्र्याःपरतोनरः॥ संध्यामुपास्यमध्यान्हेनयेत्कुलशतंदिवम्
॥ २७ ॥ पिंडदानंततःकुर्यात्पितृणांमुक्तिकाम्यया ॥ प्राचीसरस्वतीतीर्थेस्नात्वाचापियथाविधिः॥२८॥

आया ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ हे नारद ! जो प्राणी गया क्षेत्र में जोकि ब्रह्मा विष्णु महेश का साक्षात स्थान है वहां पर
उपवास करके गायत्री तीर्थ में स्नान करते हैं और सन्ध्या वन्दन करके पिंड दानादिक करने से ब्रह्म लोक में पितरों को
पहुंचा देते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥ सावित्री तीर्थ में स्नान करके जो यात्री मध्यान्ह सन्ध्या करता है वह अपने एक सौ
कुल को स्वर्ग पहुंचाता है ॥ २७ । जो यात्री प्राची सरस्वती तीर्थ में स्नान करके पितरों की मुक्ति के लिये पिंड दान करते

हैं तो उन के अनेक जन्म की सन्ध्या न करने का पाप नाश होकर पितर विष्णु लोक को जाते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥ जो कोई मनुष्य विशाला में लेलिहान भरताश्रम मुण्डपृष्ठ और गदाधर के समीप ॥ ३० ॥ आकाश गंगा में गिरि कर्ण मुख में स्नान करके पिंड दान करता है वह अपने एकसौ कुलों को ब्रह्म लोक में प्राप्त करता है ॥ ३० ॥ देव नदी वैतरणी में स्नान करता है तो पितर स्वर्ग जाते हैं गोदावरी नदी के तीर पर स्नान मात्र करने से इक्कीस कुल उद्धार हो जाते हैं

संध्यामुपास्यसायाह्नेविष्णुलोकंनयेत्पितृन् ॥ बहुजन्मकृतात्संध्यलोकान्मुक्तस्त्रिसंध्यकृत् ॥ २९ ॥ विशालायांलेलिहानतीर्थेचभरताश्रमे ॥ पादांकितेमुंडपृष्ठेगदाधरसमीपतः ॥ ३० ॥ तीर्थेचाकाशगंगायां गिरिकर्णमुखेषुच ॥ स्नातोपिण्डप्रदोब्रह्मलोकंकुलशतंनयेत् ॥ ३१ ॥ देवनद्यांवैतरिण्यांस्नातःस्वर्गंनयेत्पितॄन् ॥ स्नातोगोदावरीतीरेत्रिःसप्तकुलमुद्धरेत् ॥३२॥ सत्यंसत्यंपुनःसत्यंवैतरण्यांतुनारद ॥ एकविंशतिकुलान्याशुतारयेन्नात्रसंशयः ॥ ३३ ॥ यमद्वारेमहाघोरेयासावैतरणीनदी ॥ तामहंतर्तुमिच्छामिकृष्णांगांप्रददान्निमाम् ॥ ३४ ॥ अशक्तोयदिवाशक्तोगांप्रदद्याद्द्विजातये ॥ यासावैतरणीनामनदीत्रै

॥ ३२ ॥ हे नारद ! मैं तुम से सत्य ही सत्य कहता हूं कि वैतरणी नदी में स्नान से इक्कीस कुल तर जाते हैं इस में कुछ भी संशय नहीं है ॥ ३३ ॥ यमद्वार पर वहां ही जो वैतरणी नदी है उसके पार उतरने के लिये कृष्णा गौ को दान करे ॥ ३४ ॥ गौ मोटी होवै अथवा दुर्बल होवै ब्राह्मण को गौदान अवश्य करै वह वैतरणी नदी त्रैलोक्य में प्रसिद्ध है श्राद्ध

उसी के तारण हेतु गोदान करै। तीर्थ में जाकर तीन रात्रि वास करै ॥ ३६ ॥ जो पुरुष तीर्थ में जाकर सुव[illegible] का दान नहीं करता है वह दरिद्री होता है घृत कुल्या मधु कुल्या देविका महा नदी ॥ ३७ ॥ शिला संगम मधुश्रव[illegible] स्नान करने से दस हजार अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥ वहीं पर सपिण्ड कों को श्राद्ध करके पिण्ड दान करता है तो एकसौ कुल उद्धार करके पितरों को विष्णु लोक प्राप्त कराता है ॥ ३९ ॥ दशाश्वमेध हंस तीर्थ अमर कण्ट-

लोक्यविश्रुता ॥ ३५ ॥ सावर्तीर्णामहाभागापितृणांतारणायच ॥ त्रिरात्रोपोषणेनैवतीर्थाभिगमनेनच ॥ ॥३६॥ अदत्वाकांचनंगांचदरिद्रोजायतेनरः ॥ घृतकुल्यामधुकुल्यादेविकाचमहानदी ॥ ३७ ॥ शिलायांसंगमोयत्रतीर्थंयत्रमधुश्रवः ॥ अयुतंचाश्वमेधानांस्नानंकृत्लभतेनरः ॥ ३८ ॥ श्राद्धंसपिण्डकंकृत्वा पिण्डदानंतथैवच ॥ कुलानांशतमुद्धृत्यविष्णुलोकंनयेत्पितृन् ॥ ३९ ॥ दशाश्वमेधिकेहंसेतीर्थेत्वामरकंटके ॥ कोटितीर्थेरुक्मकुंडेपिंडदःस्वर्गनयेत्पितृन् ॥ ४० ॥ वैतरण्यांघृतकुल्यांमधुकुल्यांतथैवच ॥ कोटितीर्थेनरःस्नात्वादृष्ट्वाकोटीश्वर्नयेत्पितृन् ॥४१॥ कोटिजन्मभवंद्विप्रोधनाढ्योवेदपारगः ॥ मार्कंडेयेशको

क कोटि तीर्थ रुक्म कुण्ड में पिण्ड दान करने वाला पितरों को स्वर्ग पहुंचाता है ॥ ४० ॥ वैतरणी घृतकुल्या मधुकुल्या कोटि तीर्थ में मनुष्य स्नान करके कोटीश्वर महादेव का दर्शन करेगा ॥ ४१ । वह कोटि जन्म तक धनाढ्य वेद पढने वाला ब्राह्मण होगा मार्कण्डेय कोटीश के नमस्कार करने वाला मनुष्य पितृ तारक होता है ॥ ४२ ॥ पूर्व ही रुक्म

पारिजात वन में श्री पार्वती सहित महादेव जी एकान्त में दश हजार वर्ष रमण करते रहे ॥४३॥ तो वहीं पर मरीचि जी फल पुष्प के लिये उसी पारिजात बनमें गये मरीचिको देखकर महादेवजी अति क्रोधित हो बोले कि हमारे सुख के विघातक तुम हो इस से शाप देते हैं ॥ ४४ ॥ जिस प्रकार तूने मुझे दुःखी किया त्योंही तू भी दुःखी होवै । यह शाप पाय मरीचि जी शंकर की स्तुति करने लगे तो महादेव जी प्रसन्न होकर बोले कि वर को माँगो ॥४५॥ मरीचि बोले कि जिस प्रकार यह आपका शाप जावै वही वर दीजिये महादेव

टीशौनत्वास्यात्पितृतारकः ॥ ४२ ॥ रुक्मपारिजातवनेपार्वत्यासहशङ्करः ॥ रहस्यसंस्थितोरम्येवर्षाणा मयुतंपुरा ॥ ४३ ॥ मरीचिःफलपुष्पार्थंपारिजातवनंगतः ॥ दृष्ट्वा शप्तोमहेशेनयस्मात्सुखविघातकः ॥ ४४ ॥ दुःखीभवेतितद्भीत्यामरीचिस्तुष्टुवेशिवम् ॥ तुष्टःप्रोवाचतंशंभुर्वृणीष्ववरमुत्तमम् ॥४५॥ शापाद्भवतिमुक्तिर्मेमरीचिःप्राहशंकरम् ॥ भवेद्गयायांमुक्तिस्तेशिवोक्तःप्रययौगयाम् ॥ ४६ ॥ शिलास्थितस्तपस्तेपेसर्वेषांदुष्करंचयत् ॥ मरीचिरीश्वराच्छप्तः कृष्णत्वमगनत्पुरा ॥४७॥ तपसादारुणेनेहसोपिशुक्लत्वमागतः ॥ हरिरूपेमरीचिंचवरंवृणुहिपुत्रक ॥ ४८ ॥ किंत्वन्यत्वयितुष्टेमेमरीचिप्राहमाधवम् ॥ हर

ने कहा कि गयाजी में जाने से यह तुमारा शाप छूट जायगा शिवसे आज्ञा पाय मरीचि गयाजी को गये ॥ ४६ ॥ मरीचि गयाजी में जाकर शिला पर स्थित होय दुष्कर तप करने लगे जो महादेव के शाप से मरीचि की देह काली हो गई थी वह गौराङ्ग हो गई और ब्रह्मा विष्णु आदि देवता वर देनेके लिये आये और बोले कि हे पुत्र! वरको मांग ॥४७॥ ॥४८॥ मरीचि भगवानसे बोले हरिणीमें श्राद्ध

के शाप से छूटूं और शिला पवित्र होवै ॥४९॥ पितरों को स्वर्ग और मोक्ष देवै और जो यहां की पुष्करिणी में स्नान क[illegible] है ॥ [illegible]
होवै ॥५०॥ यहांपर जो कुछ दिया जाय वह अक्षय हो जावै यहां के स्नान करने से निज शरीर से स्वर्ग जावै ॥५१॥ पा[illegible]
पाप जैसे सांप केचुल को छोड़ देता है इसी प्रकार मनुष्यों का पाप छूट जावै यह जो पांडुशिला है जो सुन्दर कंजवर से सुशोभित है
यहां के श्राद्ध करने से श्राद्ध अक्षय हो जावै यहीं पर युधिष्ठिरजी ने श्राद्ध किया और पिंडदेने को ज्योंही उद्यत हुए त्योंही ॥५२॥५३॥

शापाद्विमुक्तोहंशिलाभवतुपावनी ॥ ४९ ॥ पितृमुक्तिकरीसाक्षात्तथेत्युक्त्वादिवंययौ । दिवौकसांपुष्क-
रिणींसमासाद्यनरःशुचिः ॥ ५० ॥ तत्रदत्तंपितृभ्यश्चभवत्यक्षय्यमित्युत ॥ तत्रस्नातोदिवंयातिस्वशरीरे
णमानवः ॥ ५१ ॥ पाप्मानंप्रजहत्येषजीर्णात्वचमिवोरगः ॥ तत्रकंजवरंपुण्यंपुण्यकृद्भिर्निषेवितम् ॥
॥ ५२ ॥ पांडुशिलावैसाप्रोक्ताश्राद्धंतत्राक्षयंभवेत् ॥ युधिष्ठिरस्तुतस्मांहिश्राद्धंकर्तुंययौमुने ॥५३॥ तत्र
काले पांडुनोक्तं मद्धस्ते देहि पिण्डकम् ॥ हस्ते त्यक्त्वा शिलायांच पिण्ड दानं चकारसः ॥ ५४ ॥
शिलायांपिंडदानेनप्रहृष्टाव्यासनंदनं ॥वरंपुत्रायप्रददौराज्यंकुरुमहीतले॥५५॥अकंटकंतुसंपूर्णत्वंमेत्राता

पांडुने कहा कि हमारे हाथ में पिंड देवो परन्तु युधिष्ठिरने हाथ में पिण्ड नहीं दिया और शिलामें पिण्ड दिया ॥ ५४ ॥ शिलापर
पिण्ड देने से ही व्यासपुत्र पाण्डु अति प्रसन्न हुये और वर दिया कि पृथ्वीतल के राज्य को तुम करो हे पुत्रक ! अकंटक
राज्य को करके निज शरीर से पितर और अनुचरों सहित स्वर्ग को जावोगे ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ नरक स्थित मनुष्य तेरी दृष्टि मात्र से

पवित्र होकर स्वर्ग जांयगे यह वर देकर पाण्डु अव्ययपद को चले गये ।। ५७ ।। सनत्कुमारजी बोले कि हे नारद ! मतङ्गपद पर श्राद्ध करनेवाला पितरों को ब्रह्मलोक प्राप्त कराता है ।। ५८ ।। ब्रह्मा विष्णु इत्यादि देवतोंने शमीगर्भ लकडी का मंथन कर तीर्थ में अग्नि को यज्ञार्थ प्राप्त किया था तभी से मख तीर्थ हुआ पितरों के स्वर्गलोक की प्राप्ति की इच्छा से जो अंगारकेश्वर को नमस्कार करके गया

हिपुत्रकास्वर्गंव्रजशरीरेणपितृभिःपार्श्वगैःसह।५६।दृष्टिमात्रेणसंपूतांनरकस्थांदिवंनया इत्युक्त्वाप्रययौपां डुःशाश्वतंपदमव्ययम् ॥५७॥ मतंगस्यपदेश्राद्धीब्रम्हलोकनयेत्पितॄन् ॥५८॥ निर्मथ्याग्निंशमीगर्भेविधि विष्णवादिभिःसह ॥ लेभेतीर्थेतुयज्ञार्थंत्रिषुलोकेषुविश्रुतम् ॥ मखसंज्ञंचतत्तीर्थंपितॄणांमुक्तिदायकम्॥५९॥ पितॄन्स्वर्गालयंयेनांसंगमेंगारकेश्वरम् ॥ गयाकूपेपिंडदानादश्वमेधफलंलभेत् ॥६०॥ भस्मकूटेभस्मनाथ स्नात्वातारयतेपितॄन् ॥ त्यक्त्वापापंभवेन्मुक्तःसंगमेस्नानमाचरेत् ॥ ६१ ॥ धौतपादोथनिःक्षीरोसंगमे स्नानकृन्नरः ॥ श्राद्धीरामपुष्करिण्यांब्रह्मलोकंनयेत्पितॄन् ॥ ६२ ॥ सुषुम्नांचमहाकुल्यांत्रिःसप्तकुलमुद्ध

कूप में पिण्डदान देने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है ।। ५९ ।। ६० ।। भस्मकूट भस्मनाथपर स्नान करके नर पितरों को तारता है संगम में स्नान करके पाप से छूट कर मुक्त होजाता है ।। ६१ ।। धौतपाद निःक्षीरा संगम में स्नान करके और रामपुष्करिणीमें श्राद्ध करने वाला पितरोंको ब्रह्म लोक प्राप्त कराता है ।। ६२ ।। सुषुम्ना महाकुली नदी में स्नान करने वाला इक्कीस कुल को उद्ध[illegible]

उक्त तीर्थ में स्नान करके वशिष्ठेश के नमस्कार करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है ॥ ६३ ॥ कारण कि यह जी अश्वमेध यज्ञ में दृष्टि को बनाया है मुनि को यज्ञ करते हुए देखकर महादेव ने कहा कि हे वशिष्ट ! वरं ब्रूहि ॥ ६४ ॥ वसिष्टजी बोले कि— हे शिवजी ! आप मेरे पर प्रसन्न हैं तो इस स्थानमें आप सदैव वास करिये शिवने तथास्तु कहकर वहींपर स्थित हुए ॥ ६५ ॥ धेनुकारण्य

रेत् । स्नातोनत्वावासिष्टेशेतत्तीर्थेचाश्वमेधभाक् ॥ ६३ ॥ दृष्टिचक्रेश्वमेधाख्यांवसिष्टोमुनिसत्तमः ॥ दृष्टि तोनिर्गतःशंभुर्वरंबृणुवसिष्टक॥६४॥प्रहेतितंवसिष्टोपिशिवतुष्टोसिमेयदि ॥ वस्तव्यंचात्रदेशेचतथेत्युक्त्वा शिवःस्थितः ॥६५॥ पिंडदोधेनुकारण्येकामधेनुपदेषुच ॥ स्नात्वाश्राद्धचर्थसंपूज्यब्रह्मलोकंनयेत्पितृन् ॥ ॥६६॥ कर्दमालयेगयानाभौसुंडीपृष्टसमीपतः ॥ स्नात्वाश्राद्धादिकंकृत्वापितृणामनृणोभवेत् ॥६७॥ फल्गु चंडीश्मशानाक्षीमंगलाद्याःसमर्चयेत् । गयायांचवृषोत्सर्गात्त्रिःसप्तकुलमुद्धरेत् ॥ ६८ ॥ यत्रतत्रास्थिता देवाऋषयोपिजितेंद्रियाः ॥ गयागजोगयादित्योगायत्रीचगदाधरः ॥६०॥ गयागयशिरश्चैवषड्गयासु

और कामधेनुपद पर स्नान करके पिंडदान देनेवाला पितरों को ब्रह्मलोक पहुंचाता है ॥ ६६ ॥ कर्दमालय गया की नाभि मुंडपृष्ट के निकट स्नान करके जो श्राद्ध पिंडदान करता है वह पितृऋणसे छूटजाता है ॥ ६७ ॥ फल्गु चण्डी श्मशानाक्षी और मंगलाजी का जो पूजन करता है और गयाजी में जाकर वृषोत्सर्ग करता है वह इक्कीस कुलको तार देता है ॥ ६८ ॥ गयाजी में जहाँ पर देवता ऋषि लोग स्थित हैं उनके

नाम यह हैं गया, गजा गयादित्य, गायत्री, गजाधर, गयाशिर यह छः मुक्ति के देनेवाले हैं श्राद्ध करनेवाला प्रथम गदाधर भगवान् का ध्यान करके ॥ ६९ ॥ ७० ॥ एकसौ एक कुल का उद्धार करके पितरों को ब्रह्मलोक प्राप्त कराता है यह गयाजी की कथा को जो मनुष्य सावधान चित्त से पाठ करता है ।७१॥ जो कोई भक्तियुक्त गयामहात्म्य को सुनता है सुनाता है वह परम गति को प्राप्त होता है ॥ ७२ ॥

क्तदायकाः । आदौगदाधरंध्यात्वाश्राद्धपिंडादिकृन्नरः ॥७०॥ कुलानांशतमुद्धृत्यब्रह्मलोकंनयेत्पितॄन् गयाख्यानमिदंपुण्यंयःपठेत्सततंनरः ॥ ७१ ॥ शृणुयाच्छ्रद्धयायस्तुसयातिपरमांगतिम् ॥ श्रीमद्गयायां माहात्म्यंशृणुयाद्यस्तुभक्तितः ॥७२॥ विधिनाव्यासपुरुषंवित्तशाठ्यंनकारयेत् ॥ गोभूहिरण्यदानानि वस्त्रालंकरणानिच ॥ ७३ ॥ संपूज्यव्यासपुरुषंभुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ पाठयेद्वागयाख्यानंविप्रेभ्यःपुण्य कृन्नरः ॥ ७४ ॥ शृणुश्राद्धंकृतंतेनकृतंतेनसुनिश्चितम् ॥ गयायामहिमानंचज्योतिष्टोमसमाहितः ॥ ॥ ७५ ॥ तेनेष्टंराजसूयेनअश्वमेधेननारद ॥ लिखेद्वालेखयेद्वापिपूजयेद्वापिपुस्तकम् ॥ ७६ ॥ तस्यगृहे

जो कोई विधियुक्त अभिमान को त्याग करके गौ भूमि सुवर्ण वस्त्र अलंकार आदि से व्यासजी का पूजन करके कथा को सुनता है उसने मानो गया श्राद्ध किया । गया का माहात्म्य ज्योतिष्टोम यज्ञ की बराबर है ॥ ७३ ॥ ७४ । ७५ ॥ जिस पुरुषने हे नारद ! इस माहात्म्य को लिखाया मानो उसने राजसूय और अश्वमेध यज्ञ किया ॥७६। जिसके गृह में यह माहात्म्य की एक पुस्तक रहती है उस प[illegible]

प्रसन्न होकर उसके गृह में वास करता है ॥ ७७ ॥ और उसके घरमें सांप अग्नि भय नहीं होता श्राद्ध के स... धलोक माहात्म्य को पढता है ॥ ७८ ॥ तो विधि हीन श्राद्ध की बराबर हो जाता और उसी स्थान में समस्त भूमण्डल के तीर्थ स्थित हो जाते हैं ॥ ७९ ॥ जिस पुरुष ने इस पुनीत गया आख्यान को जाना और पाठ किया सुना सुनाया वह समस्त पुण्यकार्य

स्थिरालक्ष्मीःसुप्रसन्नाभविष्यति । उपाख्यानंमिदंपुण्यंगृहेतिष्ठतिपुस्तकम् ॥७७॥सर्पाग्निचोरजनितंभ यंतत्रनविद्यते ॥ श्राद्धकालेपठेद्यस्तुगयामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ ७८ ॥ विधिहीनंतुसंपूर्णंपितृणांतुगयासम म् ॥ यानितीर्थानित्रैलोक्येतानितिष्ठंतितत्रवै॥७९॥ येनज्ञातंगयाख्यानंश्रुतंवापठितंमुने ॥ सोपितत्फल माप्नोतिसमग्रंनात्रसंशयः॥८०॥सूतउवाच ॥ सनत्कुमारोमुनिपुंगवायपुण्यांकथांचाथनिवेद्यभक्त्या ॥ स्वमाश्रमंपुण्यवनैरुपेतंविसृज्यसंगीतगुरुंजगाम ॥ ८१ ॥ इतिश्रीवायुपुराणेश्वेतवाराहकल्पेगयामाहा त्म्ये अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ समाप्तमिदंमाहात्म्यम् ॥

फल को प्राप्त कर लिया इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ ८० ॥ सूत जी बोले हे शौनक ! सनत्कुमारजी इस पुनीत कथा को कहकर वण्यवन से सुशोभित निज आश्रम को चले गये ॥ ८१ ॥ इति श्री उन्नावप्रदेशान्तर्गत बरौड़ाग्राम निवासी पं॰ आनन्दमाधव दीक्षितात्मज पं॰ महाराजदीन दिक्षितकृत गयामाहात्म्ये अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥